बाल विनोद वाटिका का तेरहवाँ पुष्प

भू-कवच

लेखक
श्रीशंकरराव जोशी

प्रकाशक
गंगा पुस्तकमाला-कार्यालय
प्रकाशक और विक्रेता
लखनऊ

प्रथमावृत्ति

सादी ।=)] सं० १९८० वि० [सजिल्द ॥=)

प्रकाशक
श्रीदुलारेलाल भार्गव
अध्यक्ष गंगा पुस्तकमाला कार्यालय
लखनऊ



मुद्रक
श्रीदुलारेलाल भार्गव
अध्यक्ष गंगा फाइनआर्ट प्रेस
लखनऊ

निवेदन

भूतत्त्व शास्त्र का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिये रसायनशास्त्र, पदार्थविज्ञान शास्त्र आदि कई शास्त्रों के ज्ञान की ज़रूरत पड़ती है। परन्तु भूगोल के पूर्व इतिहास और भूतत्त्व में याद आनेवाले पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करने के लिये वैज्ञानिक ज्ञान की उतनी ज़रूरत नहीं। आधुनिक युग में भूतत्त्व-शास्त्र का अध्ययन प्रत्येक राष्ट्र के लिये आवश्यक है। इस ज्ञान के बिना भूगर्भस्थ धातुओं का प्राप्त करना क़रीब क़रीब असम्भव है। योरप, अमेरिका आदि देशों में भूगर्भ विद्या की शिक्षा का समुचित प्रबन्ध किया गया है, वहाँ इसके लिये बड़े बड़े विद्यालय स्थापित किए गए हैं, वहाँ के निवासियों का भी इस विद्या के प्रति विशेष अनुराग है। परन्तु हमारे भारतवर्ष में इसका एकदम अभाव है। जिस देश में प्राथमिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था तक का अभाव सा है, उस देश में भूगर्भ विद्या की शिक्षा के लिये स्वतन्त्र विद्यालयों का स्थापित किया जाना कैसे सम्भवनीय माना जा सकता है!

यद्यपि हमारे देश से प्रतिवर्ष कई विद्यार्थी विद्याध्ययन करने के लिये अमेरिका, इंगलैंड आदि देशों में जाते हैं। किंतु उनका विशेष लक्ष्य बैरिस्टर, डॉक्टर, सिविल सरवेंट आदि बनने की ओर ही रहता है। वैज्ञानिक ज्ञान की ओर वे फूटी आँख भी नहीं देखते। हमारे कुछ नवयुवक औद्योगिक ज्ञान प्राप्त करते हैं, किंतु उनसे हमारे देश का कितना भला हुआ है? यही दशा हमारे उन युवकों की है, जिन्होंने भूगर्भ शास्त्र का अध्ययन किया है, उनसे भी देश का कुछ भी भला नहीं हो सका है। यह उनकी शिक्षा का दोष नहीं।

हमारी अकर्मण्यता एवं वैज्ञानिक अनुसंधानों के प्रति अभक्ति ही इसका एकमात्र कारण है।

इस पुस्तक में, भू-कवच में पाए जानेवाले केवल प्राणी, वनस्पति आदि पर विचार किया गया है। जहाँ तक हो सका है, विषय को सरल बनाने की चेष्टा की गई है। जहाँ कहीं वैज्ञानिक शब्द लिखने पड़े हैं उनके पर्याय (संस्कृत) शब्द भी, साथ ही दे दिए गए हैं।

इस पुस्तक के लिखने में हमें सर सी० लायल, गीकी, मॉरेल, पियो और कुक आदि भूगर्भवेत्ताओं के ग्रंथों से सहायता मिली है। तथापि सबसे अधिक सहायता हमें 'भूस्तर विषयी मूलतत्वें' नामक मराठी ग्रंथ से मिली है। अतएव हम इन सब ग्रंथकारों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

राष्ट्रभाषा हिंदी में ऐसी पुस्तकों का अभाव देखकर ही हमने—इस विषय के विशेषज्ञ न होने पर भी, यह अनधिकार चेष्टा की है। अतएव त्रुटियों का रह जाना संभव है। तथापि हमें पूर्ण विश्वास है कि विद्वान् पाठक हमें इसके लिये क्षमा करेंगे।

तराना
विजयादशमी,
संवत् १९८९

विनीत—
शंकरराव जोशी
डिप्० एजी० एफ़्० आर० एच्० एस्०

भू-कवच

पहला परिच्छेद

भूस्तर-शास्त्र वह विद्या है, जिसके द्वारा भू-कवच की रचना एव उसके घटकावयव का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। कुछ लोगों का अनुमान है कि भूस्तर-शास्त्र केवल खनिज पदार्थों और भाँति भाँति की चट्टानों (Rocks) के वर्णन पर ही समाप्त है। किंतु यह उनका भ्रम है। प्राचीन एव अर्वाचीन काल मे पाए जानेवाले प्राणियों और वनस्पतियों का परिचय भी भूस्तर शास्त्र में शामिल है।

पृथ्वी का ठोस भाग मिट्टी (Clay), खरिया (Chalk), बालू, चूने का पत्थर (Lime Stone), कोयला, स्लेट पत्थर, बिल्लौरी पत्थर (Granite) आदि भिन्न भिन्न प्रकार की चट्टानों से बना है। भू शास्त्र-वेत्ताओं ने सिद्ध किया है कि पृथ्वी का बाह्य भाग एकसाथ, एक ही प्रकार से और एक ही समय में नहीं बना है, वरन् उसका भिन्न भिन्न भाग, भिन्न भिन्न परिस्थिति मे, भिन्न भिन्न युगों में बना है। भिन्न भिन्न युगों में भिन्न-भिन्न प्रकार के जीव और वनस्पति जल और थल मे पैदा हुए थे, जिनके अवशेष अब भी भू-कवच में गड़े हुए पाए जाते हैं।

पृथ्वी एक बड़ा भारी गोला है। इस गोले का व्यास आठ हज़ार मील है। पृथ्वी के पृष्ठ भाग पर जल और थल का अनुपात ११०४ है। गोले के भीतर क्या है, यह हम नहीं जानते। कारण, हमारे अनुसधान की मर्यादा बहुत ही परिमित है। गहरी-से-गहरी खान भी आध मील से अधिक गहरी नहीं है। तथापि इस गोले के लगभग २० मील तक के भाग का अनुसधान किया जा सका है। इसमें केवल पर्वत-पार्श्व, नदी-तट के कगारों, समुद्र-तट के टीलों और खनकों द्वारा खोदे हुए भू-भाग की बनावट ही नहीं, वरन् भूगोल का वह सब भाग शामिल है, जिसका अनुसधान किया जा चुका है। 'भू-कवच' से हमारा तात्पर्य भूगोल के इसी तीस मील की गहराई तक के भाग से है। भू-कवच की रचना एव उसके भिन्न भिन्न युगों के परिवर्तनों पर से हम पृथ्वी की पूर्व स्थिति और उस पर पाए जानेवाले प्राणियों और वनस्पतियों का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

भू-कवच की चट्टानों में पाए जानेवाले अवशेषों पर से हम पाषाण-युग से पहले की बातें जान सकते हैं। उस समय में इस भूगोल पर मानव प्राणी का निवास न था। उन दिनों पृथ्वी पर जितने प्राणी निवास करते थे, वे सब बहुत ही क्षुद्र और सृष्ट पदार्थों में कनिष्ठ कोटि के थे।

भू-कवच में पाए जानेवाले अवशेषों पर विचार करने के पहले हम उन शक्तियों के सबध में कुछ लिखेंगे, जिन शक्तियों

द्वारा भू-कवच का निरंतर परिवर्तन होता रहता है। ये शक्तियाँ हैं—वायु, जल, अग्नि, प्राणी, वनस्पति, बर्फ, ताप-मान और तुषार।

१—वायु

भू-पृष्ठ पर फैली हुई धूल हवा द्वारा उड़कर बहुत दूर-दूर के प्रदेशों में फैल जाती है। भारतवर्ष में, गर्मी के मौसम में कभी कभी हवा से इतनी धूल उड़ती है कि सूर्य का तेज फीका पड़ जाता है। मध्य एशिया में कभी-कभी आकाश में इतनी धूल छा जाती है कि भरी दोपहर में सूर्य का तेज धुँधला पड़ जाता है। हवा का वेग कम हो जाने पर यह धूल एक बड़े भू भाग पर जम जाती है। इस प्रकार धीरे धीरे कई सदियों में सैकड़ों फीट मोटा धूल का स्तर जम जाता है। वैबिलन नगर के समान अति प्राचीन नगर वायु के प्रताप से हजारों फीट मोटे रज-स्तर के नीचे गड़ गए हैं।

हवा के कारण होनेवाले परिवर्तन बड़े-बड़े मैदानों में विशेष स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। समुद्र-तट की रेती उड़कर दूर-दूर के प्रदेशों में फैल जाती है। कभी कभी इस रेती के जम जाने से समुद्र तट से समानांतर छोटी-छोटी पहाड़ियाँ बन जाती हैं। इन पहाड़ियों की ऊँचाई कभी-कभी २५० फीट तक पहुँच जाती है। हवा के योग से उड़ी हुई रेती के नीचे कभी कभी सड़कें, नगर और बड़े बड़े जंगल दब जाते हैं।

योरप के पश्चिमी समुद्र-तट पर हवा का प्रभाव खूब नजर

आता है। एक विद्वान् का अनुमान है कि यहाँ रेती के टीले २० फीट प्रतिवर्ष के हिसाब से पूर्व की ओर बढ़ते जा रहे हैं। स्काटलैंड की 'मेनरी ऑफ् मार' नामक अति उपजाऊ भूमि सत्रहवीं सदी के मध्य-काल में रेत के अंदर दब गई। आज-कल इस भूमि पर सौ फीट से भी अधिक मोटी रेत की तह जमी हुई है। अरब, आस्ट्रेलिया, अमेरिका आदि देशों के रेगिस्तानों में रेत के टीलों का स्थानांतर होता रहता है। यह स्थानांतर हवा के कारण ही होता है।

२—जल

भू पृष्ठ का अधिकांश जल से व्याप्त है। सूर्य की गर्मी से यह जल भाप बनकर उड़ता है और बादल बनता है। फिर बादल जल के रूप में बरस आता है। ऊँचे ऊँचे पहाड़ोंवाले प्रदेशों में पानी ज्यादा बरसता है। बरसा हुआ जल असंख्य नदी नालों और प्रवाहों के रूप में बहकर समुद्र में जा मिलता है।

वर्षा का जल जमीन पर गिरते ही अपना कार्य प्रारंभ कर देता है। धूल आदि घुलनेवाले पदार्थ जल में घुल जाते हैं। इस भूमंडल पर हजारों नदी-नाले हैं। ये नदी-नाले दो प्रकार के कार्य करते हैं। एक तो भूमि में नाली-सी बनाकर भूमि के क्षय में सहायता पहुँचाते हैं और दूसरे जल के साथ बहकर आए हुए पदार्थों को समुद्र में पहुँचाते या तट की भूमि पर जमा कर देते हैं।

वर्षा का जल भूमि पर गिरने के समय वातावरण में होकर आता है। और वातावरण में से ऑक्सिजन और कार्बोनिक एसिड ग्रहण कर लेता है। इन गैसों के कारण वर्षा के जल में चट्टानों के क्षय करने की शक्ति आ जाती है। क्षयकारी प्रभाव सबसे अधिक कार्बोनेट ऑफ् लाइम संयुक्त चूना, संगमरमर, खरिया आदि के चट्टानों पर दृष्टिगोचर होता है। कार्बोनिक ऐसिड के योग के कारण वर्षा के जल में इन चट्टानों का क्षय जल्दी होता है। वर्षा के पानी से कठिन से कठिन चूने का पत्थर (Limestone) भी घुलकर समुद्र में बह जाता है। बहुत-से समुद्र-वासी जीव इससे अपने रहने के घर बनाते हैं।

भूमि पर गिरते ही वर्षा का जल ह्यूमस (Humous)-नामक क्षार, जो कि वनस्पति के सड़न से बनता है, ग्रहण कर लेता है। इस क्षार के कारण वर्षा के जल की विनाशक शक्ति और भी बढ़ जाती है। नदी नालों और प्रवाहों के रूप में बहता हुआ यह जल तल के चट्टानों का क्षय करता रहता है। किंतु उनका यह कार्य हम देख नहीं सकते। ह्यूमस-क्षार-युत जल का चूने की चट्टान पर ख़ूब असर पड़ता है, व इस जल में जल्दी घुल जाती हैं।

नदी के प्रवाह के कारण तली के कंकर-पत्थर एक दूसरे से टकराते और घिसने लगते हैं, जिससे वे धीरे धीरे रेती में बदल जाते हैं। इन्ही कंकर-पत्थर की रगड़ से नदी-तल

की भूमि मे गड्ढे पड़ जाते हैं। यह क्रिया निरंतर जारी रहती है, जिससे नदी का पाट धीरे-धीरे गहरा होता जाता है।

बरसात में नदी-नाला और प्रवाहों का जल गँदला होता है। यदि यह पानी एक बर्तन में भरकर रहने दिया जाय, तो कुछ समय बाद बर्तन की तली में गाद जम जायगी। यह गाद और कुछ नहीं, पहाड़ों पर से पानी के साथ बहकर आई हुई मिट्टी ही है। गँदले पानी के प्रवाह का वेग कम हो जाने पर मिट्टी, रेत आदि पदार्थ गुरुत्वाकर्षण से तली में बैठ जाते हैं। इस प्रकार रेत, मिट्टी आदि के स्तर एक पर एक जम जाते हैं।

नदी-नालों के प्रवाह के वेग पर गाद का तली में बैठना-न-बैठना अवलम्बित रहता है। नदी का वेग जितना अधिक होगा, वह उतनी ही अधिक गाद बहा ले जायगी और उतने ही भारी पत्थर वह लुढ़का सकेगी। भूमि जितनी ही ढालू होगी, नदी-नालों का वेग भी उतना ही अधिक होगा। नदी के प्रवाह का वेग कम होते ही उसकी गाद बहा ले जाने की शक्ति भी घट जाती है। अतएव प्रवाह रुक जाने पर जल में तैरनेवाले पदार्थ तली में बैठ जाते हैं। प्रत्येक नदी-नाले में प्रवाह का वेग, जमीन का ढाल कम हो जाने से, घट जाता है। दो प्रवाहों के संगम पर भी वेग न्यून हो जाता है, जिससे गाद तली में जम जाती है। इस प्रकार प्रति वर्ष नदियों की तली में गाद के स्तर एक-पर-एक जमते रहते हैं।

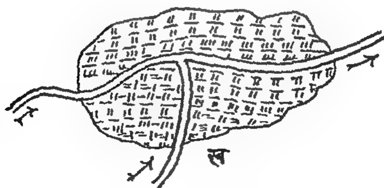
जल के प्रवाह के साथ कंकर, रेत और गाद ही बहकर नहीं

आती, वरन् झाड़-झंखाड़, कीड़े-मकोड़े और अन्य प्राणियों के शव और हड्डियाँ भी बहकर आती हैं। वेग न्यून हो जाने पर ये पदार्थ भी गाद के साथ तली में बैठ जाते हैं। अतएव स्तरों में वनस्पति और प्राणियों के अवशेष भी पाए जाते हैं।

बहुत-से नाले मीठे जलाशयों में गिरते हैं। इनके जल के साथ बहकर आए हुए पदार्थ नाले के मुख के पास जमते



क—नाले के मुख के पास गाद जम गई है।



ख—गाद से तालाब भर गया है, जिससे नाला इसमें से होकर आगे बढ़ गया है।

रहते हैं। धीरे-धीरे कुछ वर्षों में तालाब मिट्टी से भर जाता है। तब नाला उसमें से होकर आगे बहता हुआ दूसरे बड़े नाले या नदी में जा मिलता है।

छोटे-छोटे प्रवाहों द्वारा मिट्टी से भरे हुए तालाबों की तली में एक गढा खोदा जाय, तो भिन्न भिन्न स्तर दीख पड़ेंगे। शायद पहला स्तर महीन मिट्टी का होगा, दूसरा महीन रेती का और तीसरा शख सीपी या मोटी रेती का। इसके बाद चौथा स्तर पुन महीन मिट्टी का मिलेगा। ये स्तर प्रति वर्ष जमते रहते हैं। और यही कारण है कि चार पाँच स्तरों के बाद पुन वही स्तर जमे मिलते हैं। यदि कुछ दूरी पर दूसरा गढा खोदा जाय, तो सभव है स्तरों के अनुक्रम में कुछ फर्क पाया जाय। स्तरों की मोटाई भी कम ज्यादा होगी। यही बात समुद्र में भी पाई जाती है। नदी के मुख के पास एक पर एक स्तर जमते रहते हैं। यह क्रम सतत जारी रहता है।

एक बड़ी नदी एक वर्ष में बहुत ही अधिक जड़ पदार्थ समुद्र म बहा ले जाती है। एवरेस्ट-नामक एक विद्वान् का अनुमान है कि गगा-नदी प्रति वर्ष ३५,५३,६०,००० टन जड पदार्थ समुद्र म डालती है। यह तो हुई गगा नदी की बात, किंतु इसके अलावा सिंधु, ब्रह्मपुत्र, ईरावदी आदि बड़ी बड़ी नदियाँ भी तो करोड़ों टन जड़ पदार्थ समुद्र मे फेंकती हैं। इससे पाठक अनुमान कर सकेंगे कि एक सदी में पहाड़ों और मैदानों का कितना बड़ा भाग घुलकर समुद्र म आ गिरता है।

अनुमान किया गया है कि पश्चिमी योरप की नदियाँ प्रति पाँच हज़ार भाग जल में एक भाग खनिज पदार्थ बहा ले जाती हैं, जिसमें आधे से अधिक कार्बोनेट ऑफ् लाइम रहता है। इँगलैंड की टेम्स नदी प्रति वर्ष प्रति वर्गमील भूमि पर से १४० टन के क़रीब कार्बोनेट ऑफ् लाइम समुद्र में बहा ले जाती है। इस हिसाब से एक सदी में एक वर्गमील भूमि ·$\frac{८}{८०}$ इंच नीची हो जायगी या यों कहिए कि १३२०० वर्ष में एक वर्गमील भूमि एक फ़ीट नीची हो जायगी।

यदि मान लें कि भूगोल समुद्र की सतह से २१२० फ़ीट ऊँचा है, तो मिसिसीपी नदी सब भूभाग को १, २७, ५०, ००० वर्षों में समुद्र में मिला देगी।

जिन चट्टानों से समुद्र की लहरें टकराती हैं और जिन पर से वे निरंतर बहती रहती हैं उनका भी क्षय होता रहता है। समुद्र-तट के टीलों का जल की सतह के पास का भाग लहरों के टकराने से कटता रहता है। और कुछ वर्षों में ये टीले जल में आ गिरते हैं। कंकर पत्थर और माटी रेता तो किनारे के पास जल में ही पड़ा रहता है और महीन रेती लहरों के साथ बह-कर तली में जा विराजती है। माटी रेती सब लहरों के टकराने से धीरे धीरे महीन रेती में बदलकर समुद्र-तल में जा विराजती है। यह क्रिया रात-दिन जारी रहती है।

पदार्थ अविनाशी हैं। जो पदार्थ नदियों के जल के साथ बहकर समुद्र में जा गिरते हैं, उनका नाश नहीं होता—रूपा-

तर होता है। नदी के जल के साथ बहकर समुद्र में गिरने वाले पदार्थ उसके मुख से कुछ दूरी पर इकट्ठे होते रहते हैं, और उस स्थान पर एक त्रिकोणाकार भू भाग बन जाता है, जिसे डेल्टा कहते हैं।

सर-सी-लायल का अनुमान है कि मिसिसिपी-नदी के डेल्टा में प्रति वर्ष ७० दर्जे १७ करोड़ घनफीट मिट्टी नवीन जमा होती है। आपके मत से मिसिसिपी-नदी का डेल्टा, जिसका क्षेत्र-फल करीब १४ हजार वर्गमील है, साठ हजार वर्षों में बना है।

३—अग्नि

पृथ्वी के उदर में एक भयंकर शक्ति निवास करती है। यद्यपि इस शक्ति का परिणाम सर्वत्र देखा जाता है। परंतु इस शक्ति के संबंध में बहुत कम बातें मालूम हुई हैं और जो कुछ मालूम हुआ है वह सब कल्पना के बल पर। संभव है, ये कल्पनाएँ असत्य भी हों।

आज तक जितनी बातें मालूम हुई हैं, उनपर से अनुमान किया जाता है कि पृथ्वी के उदर में अत्युष्ण प्रवाही पदार्थ भरा है। गहरी खानों में किए हुए प्रयोगों पर से पता चलता है कि पृथ्वी के पृष्ठ भाग से हम ज्यों-ज्यों नीचे उतरते जाते हैं, त्यों-त्यों उष्णता बढ़ती जाती है। यह परिमाण प्रति ६४ फीट पीछे १ फ़ैरन होट है। यदि इसी हिसाब से ताप क्रम बढ़ता रहा होगा, तो दस मील की गहराई पर इतनी अधिक—

होगी कि भू कवच की कठिन-से-कठिन चट्टान भी शीघ्र ही पानी-पानी हो जायगी।

पहले लिखा जा चुका है कि पृथ्वी के उदर में अत्युष्ण प्रवाही पदार्थ भरा है। यही पदार्थ ज्वालामुखी पर्वतों के मुखों में से होकर आस पास के प्रदेशों म फैल जाता है। भूकप भी इसी शक्ति के कारण होता है।

पृथ्वी के भिन्न-भिन्न भागो मे कई ज्वालामुखी पर्वत है। अकेले प्रशात महासागर के द्वीपों में ही इनकी सख्या तीन सौ के लगभग है। समुद्र-तल में भी कई जाग्रत ज्वालामुखी हैं, और सभव है कि इनकी सख्या भू-पृष्ठ पर के ज्वालामुखियों की सख्या से अत्यधिक हो। ज्वालामुखी पर्वतो के स्फोट से भू-कवच मे पुष्कल फेर फार होते रहते हैं।

भूकप से भी भू कवच मे भयकर परिवर्तन होते हैं। इसके कारण बड़े बड़े भू-भाग पृथ्वी के अदर धँस जाते हैं और सरोवरों के स्थान पर बड-बडे पर्वत बन जाते हैं।

भूकप से जमीन एकदम ऊपर उठ आती या नीचे धँस जाती है। यही कारण है कि हमें यह बात अचरज भरी मालूम होती। परतु जमीन को धीरे-धीरे ऊँची उठते या नीचे धँसते देखकर हमें आश्चर्य नहीं होता। भू-कवच के भागों का यह परिवर्तन हमारे ध्यान मे जल्दी नहीं आता। यहाँ तक कि उस पर रहनेवाले मनुष्य भी उसे जान नहीं सकते। तथापि, अब विद्वान् लोगों का ध्यान उधर आकर्षित हुआ है, और अनुसधान किया जा रहा है।

८—प्राणी

जिन प्राणियों की कृति से भू-कवच में परिवर्तन होते हैं, वे प्रवालकीटक और पालिप*-नामक कीड़े आदि प्राणी हैं। ये प्राणी समुद्र के जल में घुला हुआ 'कार्बोनेट ऑफ़ लाइम' नामक पदार्थ निकालकर उससे अपना घर बनाते हैं। इन प्राणियों के सतत व्यापार के कारण समुद्र में बड़े बड़े टीले बन जाते और नवीन द्वीप निर्मित हो जाते हैं। शांत महासागर में कई प्रवाल द्वीप हैं।

दूसरे अनेक प्रकार के प्राणी भी समुद्र-जल के 'कार्बोनेट ऑफ़ लाइम' से सीपी, शंख आदि बनाते हैं। इन प्राणियों के मर जाने पर बहुत-सी शंख और सीपियाँ समुद्र-तल में बैठ जाती हैं। और तब इन स्तरों के एक-के-बाद एक जमने से, धीरे धीरे टीले बन जाते हैं। भारतवर्ष में कई चूने की चट्टानें हैं। ये सब फोरामिनिफेरा-नामक सूक्ष्म मछलियों की सीपियों से बनी हैं। नमुलाइट नामक छोटी छोटी मछलियों की सीपियों

---

* पालिप जल-वासी प्राणी है। इसका शरीर नली के समान लंबा, गोल या चौकोर होता है या अंड के आकार का होता है। एक सिरे पर एक महीन छेद होता है। इस छेद के सामने कई छोटे छोटे सरल तंतु होते हैं। यह छिद्र प्राणी के जठर तक चला गया है। प्राणी के जठर में आँतें नहीं होतीं और मल निकलने का मार्ग भी नहीं होता। यह अपना शरीर फुलाता और संकुचित कर सकता है और यही उस के जीवित होने का एक मात्र चिह्न है। दूसरे चिह्न दिखाई नहीं पड़ते।

के स्तरों मे नम्युलिटिक-नामक चूने के पत्थर बने हैं। ये पहले जल में बने थे, परंतु बाद में पृथ्वी की भीतरी शक्ति की अग्नि की सहायता से वे जल से बाहर निकल आए हैं। इस जाति की चट्टानें काश्मीर और हिमालय पर्वत में पाई जाती हैं। सिंधु-नदी के पूर्वी किनारे के प्रदेशों में तथा कच्छ और काबुल के पर्वतों में भी इस जाति की चट्टानें पाई जाती हैं।

चूहे, न्यौला, दीमक आदि भी जमीन के भीतर से महीन मिट्टी बाहर निकालते हैं। डार्विन महोदय का अनुमान है कि इन प्राणियों द्वारा खोदी हुई मिट्टी की मिकदार कभी-कभी एक वर्ष म १० टन तक पहुँच जाती है। यह महीन मिट्टी वर्षा के जल के साथ बहकर दूर-दूर के प्रदेशों में फैल जाती है या हवा के योग से एक बड़े भू-भाग पर छा जाती है। कई स्थानों पर बड़े-बड़े पत्थर इस मिट्टी के अन्दर दब जाते हैं।

५—वनस्पति

वनस्पति भी चट्टानों के क्षय में पुष्कल सहायता करती है। वनस्पतियों के सड़ने से कुछ सेंद्रिय क्षार उत्पन्न होते हैं, जिनके योग से जल की विनाशक शक्ति बहुत बढ़ जाती है। वनस्पति की जड़ें चट्टानों के छेदों और दरारों में प्रवेश कर उन्हें टुकड़े टुकड़े कर डालती हैं। इन टुकड़ों पर पानी, बर्फ आदि अपनी शक्ति आजमाते हैं और ये टुकड़े पिस जाते हैं।

सम शीतोष्ण और शीत-प्रधान देशों में बड़े-बड़े दलदल पाए जाते हैं। इन दलदलों में कई स्थानों पर पौदे उग आते

हैं। दिन पूरे हो जाने पर ये पौधे वहीं गिरकर सड़ जाते और उनके स्थान पर नवीन पौधे उग आते हैं। यह क्रम हमेशा चला करता है। कई वर्षों के बाद ये दलदल 'पीट क्षेत्र' हो जाते हैं। यूरप, अमेरिका और आयर्लैंड में पीट के बड़े-बड़े क्षेत्र हैं। पीट के क्षेत्र में प्राणियों के शव आदि अवशेष भी पाए जाते हैं। दलदल के कीचड़ में फँसकर डूबे हुए प्राणियों के भी शव इनमें मिलते हैं।

समुद्र-तट के छिछले भाग में कई प्रकार के पौधे उग आते हैं जिनसे जल में जाल सा छा जाता है। भूमि पर से जल के साथ बहकर आई हुई मिट्टी, रेत आदि वस्तुएँ इन पौधों की जड़ों के कारण रुककर वहीं जम जाती हैं। इन पदार्थों के जम जाने से धीरे धीरे समुद्र का छिछला भाग ऊपर उठने लगता है। इस प्रकार भू भाग की वृद्धि होती जाती है। फ्लारिडा के समुद्र-तट पर यह वनस्पति का जंगल ४ से लगाकर २० फीट की चौड़ाई तक फैला हुआ है।

समुद्र जल में उगी हुई वनस्पति तट पर या नदी के मुहाने पर रेत के अंदर दबकर पीट में परिणत हो जाती है। समुद्र में उगी हुई वनस्पति जल में से 'कार्बोनेट आफ् लाइम' चूसती है। उम्र खतम हो जाने पर ये पौधे किनारे की ओर बह जाते और लहरों से टुकड़े टुकड़े हो जाते हैं। ये टुकड़े धीरे धीरे चूनामय (Calcarious) रेत के कणों में बदल जाते हैं, और रेत वायु के वेग से उड़कर भूमि पर छोटी-छोटी पहा-

ड्रियों के रूप में इकट्ठी हो जाती है। वर्षा के जल से यह चूना मय रेत ढेले के रूप में बँध जाती है जिससे उसके नीचे की रेत हवा से उड़ने नहीं पाती। वर्षा का जल ऊपर की रेत में होकर नीचे उतरकर उसे भी ढेले के रूप में बाँध देता है जिससे एक मजबूत सफ़ेद चट्टान-सी बन जाती है। इस प्रकार का परिवर्तन बरमुडा में अधिक देखा जाता है। वहाँ समुद्र की वनस्पति से बनी हुई चूनामय रेत की चट्टान सैकड़ों मील तक फैली हुई हैं।

६—बर्फ़

जिस प्रकार शीत-प्रधान देशों में ठंड से नदी और तालाबों का जल जम जाता है, उसी प्रकार उष्ण देशों में शीत-काल में पहाड़ों पर बर्फ़ जम जाता है। गर्मी के दिनों में बर्फ़ पिघलने लगता है। बर्फ़ की चट्टानों में कंकर-पत्थर और रेती भी शामिल रहती है। ये चट्टानें पिघलकर पानी पानी होने के पहले नदी के प्रवाह के साथ बहकर सैकड़ों मील की दूरी पर चली जाती हैं। इन बर्फ़ की चट्टानों के पिघलने पर रेत आदि पदार्थ नदी की तली में बैठ जाते हैं। सेंट लॉरेंस और लेब्रेडोर के तट के पास बर्फ़ के साथ बहकर आए हुए पदार्थों के जम जाने से समुद्र में कई छोटे द्वीप बन गए हैं। हिमाच्छादित पहाड़ों से आनेवाली नदियों के द्वारा बर्फ़ के साथ बहकर आए हुए कंकर पत्थरों के जम जाने से भी छोटे-छोटे टापू बन जाते हैं। कई स्थानों पर बर्फ़ के साथ बहकर आई हुई मिट्टी

और रेत के जम जाने से नदी की धारा का मार्ग रुक जाता है। ऐसी अवस्था में धारा नवीन मार्ग का अनुसरण कर आगे बढ़ती है।

गर्मी के दिनों में बर्फ के पिघलने से बड़ी बड़ी बर्फ की चट्टानें पर्वत शिखरों पर से नीचे की ओर लुढकने लगती हैं। इनके साथ बड़े-बड़ पत्थर भी लुढकने लगते हैं। जिस प्रकार गर्म देशों में बरसात के दिनों में नदियों में जल की बाढ़ आती है, उसी प्रकार शीत प्रधान देशों की नदियों में ग्रीष्म ऋतु में बाढ़ आती है। परतु जल के साथ बहुत-सा बर्फ भी बहता आता है। कभी कभी बर्फ की बड़ी बड़ी चट्टानें पानी में तैरती रहती हैं। पिघलने पर गुरुत्वाकर्षण के कारण, बर्फ बड़े वेग से नीचे की ओर बहने लगता है। इस बर्फ के सघर्षण से पहाड़ों के कंकर-पत्थर उखड़कर बड़े वेग में नीचे की ओर जाने लगते हैं, जिससे चट्टान नगी हो जाती है। और तब वर्षा आदि अन्य शक्तियाँ उसे सहज ही में क्षय कर सकती हैं। इन नगी चट्टानों पर से जब और पत्थर लुढकते हैं, इस सघर्षण से वे घिस जाती हैं।

७— ताप-मान

उन देशों में जहाँ दिन को बहुत ज्यादा गर्मी और रात को अत्यधिक ठंड पड़ती है, ताप-मान का कार्य अच्छी तरह देख पड़ता है। आफ्रिका के समान उष्णता प्रधान देशों में दिन में चट्टानें १३०° फा० तक गर्म हो जाती हैं, और रात में वही चट्टानें

बडी शीघ्रता से ठंढी होने लगती हैं। यह एक सर्व-सम्मत सिद्धात है कि गर्मी से पदार्थों का प्रसारण (Expansion) होता है और सर्दी से आकुचन (Contraction)। इसी सिद्धात के अनुसार चट्टानों का भी प्रसारण और आकुचन होता है। यह क्रिया हमेशा होती रहती है। दिन को अत्यधिक गर्मी पड़ती है, जिससे चट्टानों का प्रसारण होता है। रात को बडी शीघ्रता से उनका आकुचन होने लगता है। प्रतिदिन इस क्रिया के जारी रहने से चट्टानें टूट जाती हैं। चट्टानों में दरारों के पड़ते ही वर्षा और वनस्पति का कार्य आरभ हो जाता है, जिससे थोड़े ही वर्षों मे वह समुद्र-तल में जा विराजती है।

८—तुषार

तुषार भी भू कवच के परिवर्तन में सहायता पहुँचाता है। ताप-मान के प्रभाव से चट्टानों में दरारे पड़ जाती हैं। तुषार इन दरारों मे जम जाता है। यह एक सर्व-मान्य सिद्धात है कि जल की अपेक्षा बर्फ को ज्यादा जगह की जरूरत होती है। बरसात का जल या तुषार चट्टान की दरारों मे जमकर बर्फ बन जाता है, जिससे चट्टानों के टुकडे हिल जाते हैं। धीरे धीरे ये टुकड़े उखड़ जाते हैं और तब जल या बर्फ के साथ बहकर नदियों में जा विराजते हैं। वहाँ जल के वेग और पत्थरों के पार-स्परिक सघर्षण से धीरे-धीरे उनका क्षय होने लगता है।

उपर्युक्त शक्तियों का कार्य पृथ्वी के उत्पत्ति-काल से चल

रहा है। इन शक्तियों के कारण आज तक भू कवच में विलक्षण परिवर्तन हुए हैं, हो रहे हैं और प्रलय-काल तक होते रहेंगे।

दूसरा परिच्छेद

ऊपर लिखा जा चुका है कि भू-पृष्ठ की चट्टानों का निरंतर क्षय होता रहता है। इन चट्टानों का कुछ भाग तो नदी-तट के प्रदेशों में फैलकर जमीन को उपजाऊ बनाता है और कुछ नदी के मुख से थोड़ी दूरी पर समुद्र में जा गिरता है। पानी के साथ बहकर जानेवाले पदार्थों में से भारी पदार्थ जल्दी तली में बैठते हैं और हलके देर से। बड़े बड़े कंकर सबसे पहले तली में बैठते हैं और रेत उसके बाद। उसके बाद महीन रेती और तब मिट्टी। ये स्तर समुद्र की तली में क्षितिज समानांतर जमते हैं। इन स्तरों को देखकर कहा जा सकता है कि सबसे ऊपर का स्तर नवीन और सबसे नीचे का स्तर सबसे पुराना है।

भाटा के समय समुद्र की तली को ध्यान देकर देखने से मालूम होगा कि वह कीचड़ और रेती से बनी है। यदि पाँच-सात फ़ीट गहरा गढ़ा खोदकर देखा जाय, तो टूटे-फूटे शंख और सीपी मिलेंगी। नदी के मुख के पास की तली में केवल जलज वनस्पतियों और प्राणियों के ही अवशेष नहीं मिलेंगे, बरन् जिन प्रदेशों में होकर वह नदी और उसकी सहायक नदियाँ बहकर आई हैं, उन प्रदेशों के थलवासी जीवों और वनस्पतियों के अवशेष भी मिलेंगे। और इन्हीं अवशेषों के आधार पर तत्कालीन जीव जंतु और वनस्पति का हाल ज्ञात

हो सकता है। परन्तु सीपी के जीव आदि मृदु शरीरवाले प्राणियों के मृदु भाग जल्दी सड़ जाते हैं, और रासायनिक क्रिया द्वारा उनके शरीर के अंगभूत पदार्थ अन्य पदार्थों में परिवर्तित हो जाते हैं। यही कारण है कि सीपी, शंख और हड्डियों के सिवा अन्य प्रकार के अवशेष बहुत कम पाए जाते हैं। समुद्र की तली में जमे हुए स्तरों में जो-जो अवशेष पाए जाते हैं, उन पर विचार करने के पहले भू-कवच में पाई जानेवाली मुख्य मुख्य चट्टानों पर संक्षेप में विचार कर लेना उचित होगा।

भू-कवच में पाई जानेवाली चट्टानें

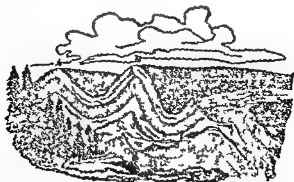
भू स्तर शास्त्र में 'चट्टान' शब्द का उपयोग अधिक व्यापक अर्थ में किया जाता है। अर्थात् भू कवच में पाए जानेवाले सब खनिज पदार्थ—क्या मृदु क्या कठिन—इस नाम से पहचाने जाते हैं। इस व्याख्या के अनुसार रेती, चिकनी मिट्टी, क्वार्ट्ज (कठिनोपल) आदि को चट्टान ही कहेंगे।

भू कवच की अधिकांश चट्टानें स्तरों के जमने से ही बनी हैं। ये स्तर एक पर एक जमे रहते हैं। चट्टानें तीन प्रकार की हैं—१ जल जन्य (Aqueous or Stratified), २ अग्नि-जन्य (Igneous) और ३ स्तरीभूत स्फटिकमय (Metamorphic or Stratified crystalline)।

जल-जन्य चट्टानों के कई भेद हैं। अग्नि-जन्य चट्टानें दो प्रकार की होती हैं। आगे चलकर इन चट्टानों के भिन्न भिन्न वर्गों पर विचार किया गया है।

हिमालय पर्वत संसार में सबसे ऊँचा पर्वत है। इस पर्वत पर समुद्र की सतह से १८००० फीट की ऊँचाई पर कुछ चट्टानें मिली हैं, जिनमें शंख-सीपियाँ आदि समुद्रवासी जीवों के अवशेष पाए गए हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि अति प्राचीन काल में यह पर्वत समुद्र-गर्भ में था। परन्तु बाद में भू-गर्भ की अग्नि रूपी शक्ति ने इसे एकदम इतना ऊँचा उठा दिया।

वक्रस्तर—जल-जन्य चट्टानों में स्तरों की रेखाएँ साफ़ नज़र आती हैं। ये स्तर अक्सर क्षितिज-समानांतर होते हैं। किंतु कहीं-कहीं ये स्तर तिर्छे पाए जाते हैं। अग्नि रूपी शक्ति ने इन्हें ऊँचा उठा दिया है। जहाँ स्तरीभूत चट्टानें ऊपर उठ आई हैं, वहाँ वे वक्र या तिर्छी नज़र आती हैं। पर्वत श्रेणियों में वक्रस्तर बहुत पाए जाते हैं। नीचे एक वक्रस्तर का चित्र दिया जाता है।



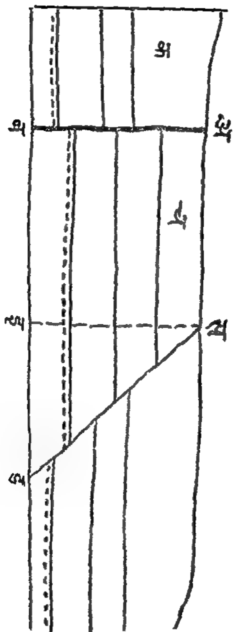
भिन्न भिन्न प्रदेशों के भू-स्तर का निरीक्षण करते समय भिन्न भिन्न स्तरों के डिप और स्ट्राइक हमेशा याद रखना चाहिए।

निर्गम (Out Crop)—वक्रस्तर ज़मीन से बाहर निकल आते हैं। इस ऊपर निकले हुए भाग को या स्तर की बाजू के टीले को 'निर्गम' कहते हैं। चित्र न० १ में ए, बी टीले ज्यों के-त्यों हैं, परन्तु सी स्थान पर वह टूटा हुआ है। अतएव सी स्थान पर ए, बी, सी तहें ऊपर निकल आई हैं। इसे ही खानक लोग स्तरों का 'निर्गम' (Out Crop Basset) कहते हैं।

भग (Fault Shift Slip or Throw)—कभी कभी स्तरों के कुछ भाग के बाहर निकल आने या नीचे धँस जाने से स्तर टूट जाते हैं। नीचे के चित्र में भू-कवच का अ भाग ऊपर उठ आया है, जिससे स्तर टूट गया है। इस स्थानांतर को भग कहते हैं, और इस स्थानांतर के विस्तार को भग विस्तार। जिस बाजू के साथ तुलना की जाती है, उसके मान से उस भग को 'ऊर्ध्वभग' या 'अधोभग' कहते हैं।

नीचे के चित्र में ख सतह क सतह से ऊर्ध्वभग और ख से क अधो भग है। अ ब सीधा भग और स ड तिर्छा भग है। खानों में बहुत-से भग मिलते हैं। भग मिलने पर स्थानांतरित स्तर को ढूँढ निकालने में भग विस्तार और झुकाव बहुत काम आते हैं।

शिखर रेखा(Anticlinal) और तल रेखा (Synclinal



चित्र नं० ४—स्तर भंग

अन्य खनिज पदार्थ

कार्बनिट ऑफ् लाइम, फेलस्पार, अबरक और हार्नब्लैंड नामक खनिज पदार्थ ही साधारणतया सर्वत्र पाए जाते हैं। सिलिका के बाद इन्हीं का नंबर आता है।

कार्बोनेट ऑफ् लाइम—यह बहुत से स्थानों म स्फटिक के रूप में पाए जाते हैं। इसके स्फटिक को कालकस्पार और आइसलैंडस्पार कहते हैं। इनकी आकृति दीर्घ चौकोण होती है और हथौड़े से फोड़ने पर उसके टुकड़े भी उसी आकार के होते हैं। चट्टान पर थाड़ा सा जल-मिश्रित (Diluted) 'सल फरिक ऍसिड' नाइट्रिक (Nitric) या म्युरेटिक ऍसिड (Muratic acid) डालने से वह बुदबुदाने लगता है। और इसकी पहचान का यही एक-मात्र साधन है।

फेलस्पार—यह क्वार्ट्ज से कुछ मृदु होता है। चाकू से कट जाता है। इसका रंग काँच के समान स्वच्छ, सफेद या कपरा होता है।

अबरक—अबरक को फाड़ने मे उसके पतले पतले समानांतर पतरे हो जात हैं। और इसी विशिष्ट धर्म के कारण वह सहज ही पहचाना जा सकता है। यह कई जगह पाया जाता है।

हार्नब्लैंड—यह कई प्रकार का हाता है। इसका रंग काला या हरा हाता है। इसमे लोहा और अल्युमिना ज्यादा पाया जाता है।

रवलमय चट्टानें (Siliceous Rocks)

ये चट्टानें कार्बोनेट ऑफ् लाइम, ऑक्साइड ऑफ् आयरन या अन्य सधापक पदार्थों से बालू के जम जाने से बनती हैं।

यदि चट्टान शुद्ध रवलमय होती है, तो उस पर ऍसिड का असर नहीं होता और न वह चाकू से कटती ही है।

मोटी बालू और गोल ककरों के संधापक पदार्थों के मयाग से जम जाने से एक प्रकार का पत्थर बनता है जिसे 'कन्लोमरेट' (Conglomerate) या 'पुडिंग स्टान' (Pudding Stone) कहते हैं।

शेल (Shale)—दबाव के कारण चिकनी मिट्टी के घन हो जाने से शेल बनते हैं। इसकी रचना अभ्रक के समान सपत्र होती है।

स्लेट (Slate)—शेल के कठिन हो जाने पर स्लेट नामक चट्टान बनती है। यह जल्दी फूटती है, और फूटने पर उसके भीतर समानातर तहें देख पड़ती हैं। ऍसिड के स्पर्श से इसका कुछ नहीं बिगड़ता।

चूनायुत चट्टानें (Calcareous Rocks)—इस जाति की चट्टानों में चूने के पत्थर (Lime Stone), चाक, संगमर-मर आदि शामिल हैं। कार्बोनेट ऑफ् लाइम इन चट्टानों का मुख्य पदार्थ है। सब प्रकार की कैल्केरियस (चूनामय) चट्टानों की रचना एक-सी होती है। कई चूने के पत्थर, छोटी-छोटी सीपियों और प्रवाल से बने होते हैं। सीपी और प्रवाल भी

अन्य खनिज पदार्थ

कार्बोनेट ऑफ् लाइम, फेलस्पार, अभ्रक और हार्नब्लैंड नामक खनिज पदार्थ ही साधारणतया सर्वत्र पाए जाते हैं। सिलिका के साथ इन्हीं का नम्बर आता है।

कार्बोनेट ऑफ् लाइम—यह बहुत से स्थानों में स्फटिक के रूप में पाए जाते हैं। इसके स्फटिक को काल्करपार और आइसलैंडस्पार कहते हैं। इनकी आकृति दीर्घ चौकोण होती है और हथौड़े से फोड़ने पर उसके टुकड़े भी उसी आकार के होते हैं। चट्टान पर थोड़ा सा जल मिश्रित (Diluted) 'सल-फरिक ऍसिड' नाइट्रिक (Nitric) या म्युरेटिक ऍसिड (Muratic acid) डालने से वह बुदबुदाने लगता है। और इसकी पहचान का यही एक-मात्र साधन है।

फेलस्पार—यह क्वार्ट्ज से कुछ मृदु होता है। चाकू से कट जाता है। इसका रंग काँच के समान स्वच्छ, सफेद या भूरा होता है।

अभ्रक—अभ्रक को फाड़ने से उसके पतले पतले समानान्तर पतरे हो जाते हैं। और इसी विशिष्ट धर्म के कारण वह सहज ही पहचाना जा सकता है। यह कई जगह पाया जाता है।

हार्नब्लैंड—यह कई प्रकार का होता है। इसका रंग काला या हरा होता है। इसमें लोहा और अल्युमिना ज्यादा पाया जाता है।

खलमय चट्टानें (Siliceous Rocks)

ये चट्टानें कार्बोनेट ऑफ् लाइम, ऑक्साइड ऑफ् आयरन या अन्य सधापक पदार्थों से बालू के जम जाने से बनती हैं।

यदि चट्टान शुद्ध खलमय होती है, तो उस पर ऍसिड का असर नहीं होता और न वह चाकू से कटती ही है।

मोटी बालू और गोल कंकरों के संधापक पदार्थों के संयोग से जम जाने से एक प्रकार का पत्थर बनता है जिसे 'कग्लोमरेट' (Conglomerate) या 'पुडिंग स्टोन' (Pudding Stone) कहते हैं।

शेल (Shale)—दबाव के कारण चिकनी मिट्टी के घन हो जाने से शेल बनते हैं। इसकी रचना अभ्रक के समान सपत्र होती है।

स्लेट (Slate)—शेल के कठिन हो जाने पर स्लेट-नामक चट्टान बनती है। यह जल्दी फूटती है, और फूटने पर उसके भीतर समानांतर तहें देख पड़ती हैं। ऍसिड के स्पर्श से इसका कुछ नहीं बिगड़ता।

चूनायुक्त चट्टानें (Calcareous Rocks)—इस जाति की चट्टानों में चूने के पत्थर (Lime Stone), चाक, सगमरमर आदि शामिल हैं। कार्बोनेट ऑफ् लाइम इन चट्टानों का मुख्य पदार्थ है। सब प्रकार की कैल्केरियस (चूनामय) चट्टानों की रचना एक-सी होती है। कई चूने के पत्थर, छोटी-छोटी सीपियों और प्रवाल से बने होते हैं। सीपी और प्रवाल भी

उन्हीं तत्वों से बने होते हैं, जिनसे चूने का पत्थर बनता है। परंतु उनमें सेंद्रिय पदार्थ अधिक होते हैं। चूने के पत्थर भिन्न भिन्न रंग के होते हैं।

नीस (Gniss)—क्वार्ट्ज, फेलस्पार और अबरक ग्रेनाइट के अंगभूत पदार्थ हैं। यही पदार्थ नीस में भी पाए जाते हैं। अतएव उसे प्रस्तरीभूत ग्रेनाइट कह सकते हैं।

मायका शिस्ट (Mica Schist)—यह क्वार्ट्ज और अबरक से बना हुआ सपत्र संयुक्त पदार्थ है। इसकी रचना भिन्न भिन्न प्रकार की होती है। किसी चट्टान में अबरक ज्यादा पाया जाता है और किसी में क्वार्ट्ज।

तीसरा परिच्छेद

ग्रेनाइट प्रस्तरीभूत चट्टान का मूल है। कल्पना कर ली गई है कि यह भूगोल पूर्व-काल में अत्युष्ण प्रवाही पदार्थ का गोला था। यदि मान लें कि ग्रेनाइट उसका बाहरी स्तर है, तो उसके साथ ही भिन्न-भिन्न जल-जन्य चट्टानों मे पाए जानेवाले सेंद्रिय पदार्थों के अवशेषों और अन्य प्रमाणों के आधार पर अति प्राचीन काल में पृथ्वी पर पाए जानेवाले प्राणियों और वनस्पतियों के संबंध मे ज्ञान प्राप्त हो सकता है।

न्यस्तावशेष (Fossil)—किसी प्राणी या वनस्पति के प्राकृतिक कारणों द्वारा मिट्टी के अंदर दब जाने पर उनके अस्तित्व के जो चिह्न भू-कवच की चट्टानों मे पाए जाते हैं, उन्हें 'न्यस्तावशेष' (Fossil) या 'उत्खात' कहते हैं। ये न्यस्तावशेष सेंद्रिय पदार्थों के रूप मे होते हैं या पद चिह्न या साँचे के रूप में। निर्जीव प्राणियों की हड्डियाँ, दाँत, पाषाण रूपी मल, पशु पक्षी और कीड़ों के पद चिह्न भी न्यस्तावशेष ही कहे जाते हैं। बहुत-से न्यस्तावशेष तो इतने सुंदर और पूर्ण दशा में पाए जाते हैं कि उनमें अति कोमल पत्तों की नसें और रेखाओं के चिह्न तक ज्यों के-त्यों मिलते हैं। कभी कभी पाषाणी भवन की [illegible] पाषाणी पदार्थ के स्थान पर सिलिका का पता [illegible] पाया जाता है। यह परिवर्तन इतनी

उत्तम रीति से होता है कि पाषाणीभूत लकड़ी में उसकी बनावट जैसी-की तैसी पाई जाती है।

अतर्न्यस्त शङ्ख एव उसका साँचा

भू-कवच की चट्टानों की परीक्षा भिन्न भिन्न प्रकार से की



चित्र नं० ६—अतर्न्यस्त शङ्ख

जाती है। चट्टानों का बारीकी से निरीक्षण करने पर भू-स्तरवेत्ता को मालूम हो जाता है कि पृथ्वी पर भिन्न भिन्न काल में भिन्न भिन्न प्रकार के सजीव और सेंद्रिय पदार्थों का अस्तित्व था। ये पदार्थ सब जगह एक-से नहीं पाए जाते, तथापि भिन्न भिन्न स्थानों के पदार्थों में बहुत कुछ साम्य पाया जाता है।

स्तरों का अनुक्रम—ऊपर लिखा जा चुका है कि पृथ्वी के उदर में अग्नि-रूपी शक्ति निवास करती है। इसी शक्ति की बदौलत किसी जगह पर तो जमीन ऊपर उठ आती है और किसी स्थान पर नीचे धँस जाती है। और यही कारण है कि

ग्रेनाइट और इसके स्तर यथानुक्रम नहीं मिलते। एक आध स्थान पर ग्रेनाइट पर दूसरी तह जमने के पहले यह जल के बाहर निकल आता है। जल के अंदर के भाग पर दूसरे स्तर, एक-पर-एक, जमते रहते हैं। ऐसे स्थानों पर स्तरों का अनुक्रम बिलकुल नहीं मिलता। यहाँ यह प्रश्न उपस्थित होता है कि तब स्तरों का अनुक्रम किस प्रकार निश्चित किया जाय?

कल्पना कीजिए कि किसी भूस्तरवेत्ता को एक स्थान पर ग्रेनाइट के ऊपर स्लेट का स्तर मिला है और उसके ऊपर चूने की तह। इससे वह तो यही अनुमान करेगा कि चूने की चट्टान की तह स्लेट की तह के बाद की है। यदि उसे एक दूसरे स्थान पर ग्रेनाइट पर बालू की तह मिले और उस पर चूने की तह। और तीसरे स्थान पर बालू की तह पर स्लेट की तह। इससे यह अनुमान सहज ही हो जाता है कि स्लेट की तह ग्रेनाइट के बाद की है। रेती की तह उसके बाद की और चूने की तह सबके बाद की है। अतएव वह स्तरों का अनुक्रम इस प्रकार बाँधेगा—स्लेट, बालू की चट्टान, और चूने की चट्टान। इससे यह सिद्ध होता है कि पहले स्थान पर बालू की तह जमते समय सूखी जमीन का कुछ भाग स्लेट चट्टान का था और चूने का स्तर जमने के समय वह पुन जल में धँस गई होगी। पृथ्वी के भिन्न भिन्न भागों के स्तरों की तुलना करने पर सब प्रकार की प्रस्तरीभूत चट्टानों का अनुक्रम बाँधा जा सकता है।

प्रस्तरी चट्टानों में प्राणियों और वनस्पतियों के अस्तित्व

के प्रमाण पाए जाते हैं। इन्हीं प्रमाणों के आधार पर भूस्तर-वेत्ताओं ने चट्टानों को चार विभागों में विभक्त किया है।

चट्टानों का वर्गीकरण			चट्टानों की मोटाई
१ अज़ोइक (निरचैतन्य युग)			३६००० फ़ीट
२ पालिओज़ोइक (Palaeozoic) (प्राचीन प्राणी विशिष्ट युग)	अध-स्तर	सिलुरियन (Silurian)	३०००० ,,
	उपरि-स्तर	१ डेवोनियन (Devonian)	५००० ,,
		२ कार्बोनिफ़रस (Carboniferous)	१२००० ,,
		३ परमियन (Permian)	३००० ,,
३ मेसोज़ोइक (Mesozoic) (मध्यम प्राणी विशिष्ट युग)	१ ट्रियासिक (Triassic)		२२०० ,,
	२ ओओलिटिक (Oolitic)		४६०० ,,
	३ क्रिटेशियस(Cretaceous)		११००० ,,
४ निओज़ोइक (Neozoic) (नूतन प्राणी विशिष्ट युग	१ टरशरी (Tertiary)		६००० ,,
	२ रिसेंट (Recent)		

उपर्युक्त वर्गीकरण स्थूल दृष्टि से किया गया है। हरएक युग की चट्टानों के विभाग दे दिए गए हैं—उनके उपविभाग छोड़ दिए गए हैं। तथापि जहाँ कहीं आवश्यकता समझी गई है, उपविभागों पर भी विचार किया गया है।

सरलीलयलने अपनी Student's Elements of Geo

logy नामक पुस्तक के ११०वें पृष्ठ मे चट्टानों का वर्गीकरण दिया है। उन्होंने मेसोज़ोइक और टरशरी-नामक विभागों को निओज़ोइक युग की चट्टानों का उपविभाग माना है। परंतु हमने कुरु साहब का अनुकरण करते हुए मेसोज़ोइक और निओज़ोइक को दो भिन्न-भिन्न युग की चट्टानें मानकर तदनुसार ही वर्गीकरण किया है।

भूगोल का अनुमानित इतिहास

भू कवच की चट्टानों पर से भूगोल के प्राचीन इतिहास का अनुमान किया जा सकता है। मानव-जाति की सृष्टि हुए बहुत थोड़े वर्ष हुए हैं। प्राचीन काल की चट्टानों में मानव-प्राणी एव उनकी कृति के अवशेष बिलकुल नहीं पाए जाते। यहाँ तक कि टरशरी युग के अंत तक मानव प्राणी के अस्तित्व का पता नहीं चला है। गत युगों की चट्टानों मे पाए हुए अवशेषों के आधार पर भूगोल का निम्न-लिखित इतिहास अनुमानित किया गया है।

अति प्राचीन काल में यह भूगोल अत्युष्ण प्रवाही पदार्थ का गोला था। उस जमाने में इस पर जल भी नहीं था। यदि होगा भी, तो अंतरिक्ष में वाष्प के रूप मे होगा। यह युग निश्चैतन्य युग के पहले का है। इस युग का अंत ग्रेनाइट बनने के समय से होता है। इसके बाद पृथ्वी इतनी ठंडी हो गई कि उस पर जल रह सके। इसी युग में अज़ोइक युग की चट्टानें बनीं, जिनकी मोटाई ४१ मील के क़रीब है। निश्चैतन्य युग के बाद

के युग में अत्यंत सरल आकृति के प्राणियों की सृष्टि हुई। सबसे पहले प्रवाल कीटक (Zoophytes)-नामक अति सूक्ष्म प्राणी पैदा हुए। इन्हें न तो वृक्ष ही कह सकते हैं और न प्राणी ही। इनमें इन दोनो के गुण हैं। फिर शख और सीपी के जीव और तदनंतर केकडे के समान ट्रिलोबाइट (Trilo bite)-नामक प्राणी उत्पन्न हुए। इस युग के बाद के काल में जिरह-बख्तर के समान कठिन कवचवाली मछलियाँ तत्कालीन प्राणियों में मुख्य थी। इसी युग में वनस्पति निर्माण होने के प्रमाण मिलते हैं। इस मत्स्य-युग के बाद वनस्पति की खूब वृद्धि हुई। इस युग का वर्णन करते हुए एक विद्वान भूस्तर-वेत्ता ने लिखा है—

"उत्तर ध्रुव से लगाकर दक्षिण में मकर वृत्त तक का सब भू भाग वनस्पति और झाड-झखाडों से परिपूर्ण था, जिससे दूसरे ग्रहो के निवासियों को हमारी पृथ्वी हरे रग की नजर आती रही होगी। भूगर्भ में पाया जानेवाला कोयला इसी युग के अस्तित्व का प्रमाण है।"

इस वनस्पति-युग के अंत में कार्बोनिफरस चट्टानें बनीं। इसके बाद के युग में पृथ्वी पर प्रचंड उरग प्राणियों का प्राबल्य बढ़ा। इस युग में मगर की जाति के हाथी के समान प्राणी थे और परवाले महाभुजग जगलों में इधर उधर उड़ा करते थे। इनके फैले हुए परों का विस्तार एक सिरे से दूसरे सिरे तक २५ फीट तक होता था।

उरग प्राणियों के बाद के युग में पृथ्वी पर प्रचड सस्तन प्राणियों का अस्तित्व हुआ। इस युग में बड़े बड़े प्रचड हाथी, ममाथ, मस्तोदन (Mastodon) और हिनोथीरियम-नामक प्राणी अत्यधिक थे। हिमालय पर्वत के टरशरी-युग के स्तर में मिले हुए अवशेषों से मालूम होता है कि उस युग में हाथी के समान हिरन होते थे। सभवत इसी युग के अत मे मानव प्राणी की सृष्टि हुई। कारण कि आधुनिक काल की चट्टानों मे व्याघ्र आदि हिंस्र पशुओं की हड्डियों के साथ ही-साथ मनुष्य की हड्डियाँ और मट्टी के बरतन भी पाए जाते हैं। मानव-जाति की सृष्टि होने के पहले के युगों को बाद के युगों से तुलना करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मानव-जाति का जन्म हुए बहुत थोड़ा समय हुआ है।

निश्चेतन युग

भू-कवच में पाए हुए प्रमाणों से पता चलता है कि करो वर्ष में भूगोल इतना ठढा हो पाया कि उस पर जल प्रवाही पदार्थ के रूप में रह सके और जल की सृष्टि होने के अरबों वर्ष बाद मानव प्राणी का जन्म हुआ। इसी मध्य युग मे अजोइक चट्टानें बनीं। अजोइक युग की चट्टाने अग्नि जन्य चट्टानों और प्रस्तरी भूत चट्टानों को जोड़नेवाली हैं।

अजोइक चट्टानें तीन मुख्य भागों मे विभक्त की गई हैं। तीन विभाग नीस, मैकाशिस्ट और क्लेस्लेट हैं। इनके संबध र लिखा जा चुका है।

नीस चट्टानें जल की कृति हैं। मैकाशिस्ट और क्लेस्लेट ग्रेनाइट और नीस के पृथक्करण से बनी हैं। अतएव ग्रेनाइट से उनका साम्य धीरे धीरे कम होता जाता है और उनकी बनावट भी महीन दीख पड़ती है। मि० ह्यूग मिलर (Hugh Miller) इस युग के संबंध में लिखते हैं—"अजोइक युग में भू-कवच इतना उष्ण था कि पानी में जमी हुई पहली तह अर्ध प्रवाही रूप में जमी थी। एवं यह स्फटिकमय थी। इसके ऊपर का मैकाशिस्ट स्तर भी उसी के समान विषम है। किंतु सबके ऊपर के क्लेस्लेट की रचना एक-सी है और उसके स्तर भी व्यवस्थित हैं।" इस पर से अनुमान किया जाता है कि उस समय पृथ्वी पर के पदार्थ धीरे-धीरे शीतल हो चले थे एवं निष्प्राणी युग के अंत में वे बहुत ठंडे और स्थिर हो गए थे।

भारतवर्ष में निश्चैतन युग की चट्टान कई स्थानों पर पाई जाती हैं। हिमालय पर्वत में कई स्थानों पर सिलूरियन स्तर-संचय के नीचे नीस पाया जाता है। वहीं मैकाशिस्ट के स्तर से उसके स्तर मिल गए हैं। नर्मदा की घाटी में भी अजोइक युग की चट्टानें पाई जाती हैं। दक्षिण भारत में इस युग की चट्टानें ज्यादा पाई जाती हैं। वहाँ नीस हजारों मील तक फैला हुआ है। दक्षिण भारत में नीस, मैकाशिस्ट और क्लेस्लेट के बड़े-बड़े स्तर पाए जाते हैं। इस स्तर में याकूत-नामक पत्थर भी मिलता है।

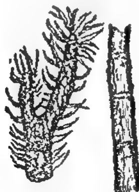
निश्चेतन युग की चट्टानों के पत्थर इमारतों में लगाने योग्य नहीं हैं। तथापि उनमें अशुद्ध धातु और मूल्यवान् खनिज पदार्थ बहुत पाए जाते हैं। भारतवर्ष की अजोइक चट्टानों में अजमेर में शीशा और ताँबा, दक्षिण महाराष्ट्र में लोहा और ताँबा, और बाराकर नदी के तट पर कथील पाया जाता है। याकूत पत्थर तो सब जगह पाया जाता है। दक्षिण भारत में कुरुद पत्थर और मैसोर में पिरौजा-नामक पत्थर मिलता है। सिंहल-द्वीप में पाया जानेवाला क़ीमती पत्थर भी इसी युग की चट्टानों में मिलता है।

चौथा परिच्छेद

पालिओज़ोइक युग

सबसे पहले इसी युग की चट्टानों में सेंद्रिय पदार्थों के अवशेष मिले हैं। इस युग को चट्टानों के उपविभाग पहले दिए जा चुके हैं।

सिलूरियन स्तर सचय—यह स्तर-सचय पहलेपहल वेल्स-देश के उस प्रदेश में पाए गए थे, जहां प्राचीन काल में सिलूरियन लोग रहा करते थे। और इसलिये इसे यह नाम दिया गया है। इस स्तर-संचय की मोटाई ८३ मील से भी अधिक है। इसमें बालू के पत्थर (Sand Stone), चूने के पत्थर



चित्र नं० ६—ग्रैपटोलाइट

(lime stone) और ककरों के ढेले चिपके हुए पाए जाते हैं। सिलूरियन चट्टान के सबसे नीचे के स्तर में पाए हुए अवशेषों पर से मालूम होता है कि पृथ्वी पर पहलेपहल जो प्राणी निर्माण हुए थे, वे समुद्रवासी जूफाइट्स (प्रवाल कीट) थे। यह प्राणी ऊपर के चित्र में दिखाया गया है। ऐसे ही एक दूसरे प्राणी को 'ग्राप्टोलाइट' (Graptolite) कहते हैं। ऊपर इस प्राणी की दो जातियों के चित्र दिए गए हैं।

मोलस्का (mollusca)—मृदु शरीरवाले प्राणी सिलूरियन चट्टानों में बहुत पाए जाते हैं। परन्तु सिलूरियन चट्टानों में पाए जानेवाले न्यस्तावशेषों में 'ट्रिलोबाइट' *(Trilobite) के न्यस्तावशेष मुख्य हैं।

भारतवर्ष के आस पास के समुद्र में क्रेट (crate)-जाति के प्राणी बहुत पाए जाते हैं। यह प्राणी ट्रिबोलाइट वर्ग का है। इस प्राणी की आँखें बहुत बड़ी और पहलूदार होती थीं। प्रोफेसर ओवेन साहब ने लिखा है कि इन पहलुओं की संख्या ६००० तक होती है। यह प्राण पालिओज़ोइक युग की

*बरमीस्टर-नामक लेखक ने लिखा है कि ये प्राणी समुद्र में तैर सकते थे और जलवासी क्षुद्र जीव ही इनका भोजन था। मि० एम० बेरंडा (Barrande) अपने Silurian Rocks of Bohemia ग्रंथ में लिखते हैं कि यह प्राणी कई बार त्वचा बदलता था।"

चट्टानों में ही पाया जाता है। इसकी एक-दो जातियाँ कार्बो निफरस स्तर सचय में भी पाई जाती हैं, किंतु इसके बाद उनका पता नहीं चलता।

बोहेमिया, रूस, अमेरिका आदि पृथ्वी के भिन्न भिन्न देशों में सिलूरियन स्तर-सचय पाया जाता है। हिमालय पर्वत में कहीं कहीं नीस के स्तर पर इस स्तर-संचय की तहें पाई जाती हैं। इनमें न्यस्तावशेष भी मिलते हैं। सिलूरियन स्तर और उसके नीचे के अजोइक स्तर सचय में कीमती धातुएँ न्यूनाधिक परिमाण में पाई जाती हैं। इनमें से सोना, चाँदी, ताँबा, शीशा, पारा आदि धातुएँ विशेष महत्त्व की हैं।

डेवोनियन स्तर-सचय (लाल बालू की चट्टान)—सिलूरियन चट्टानों की तहों के ऊपर डेवोनियन स्तर-सचय की तहें हैं। ये चट्टानें अधिकतर रेत से बनी होती हैं। इँगलैंड के डेवनशायर प्रांत में इस प्रकार की चट्टानें ज्यादा पाई जाती हैं और इसीलिये इसे यह नाम दिया गया है।

डेवोनियन वर्ग की चट्टानों का निरीक्षण करने से मालूम होता है कि उस युग में बड़े बड़े समुद्र-तट थे, जिन पर बालू और ककरों का बाहुल्य था। आक्साइड ऑफ् आयर्न-नामक सघापक पदार्थ के योग से बालू के ढेले बँध जाते हैं और इसी पदार्थ के कारण पत्थर का रग लाल हो जाता है।

डेवोनियन वर्ग की चट्टानों में एक नवीन प्रकार का प्राणी

पाया जाता है। सभवत यह प्राणी सिलूरियन युग के [illegible] में सृष्ट हुआ होगा। इस युग में मछलियाँ [illegible] थीं। [illegible] आधुनिक काल की मछलियों के समान उनके [illegible] होते थे—वरन् उनके शरीर दृढ कवच से ढके [illegible] थे। [illegible] टेरिक्थिस मिलरे-नामक एक सपक्ष [illegible] गया है।

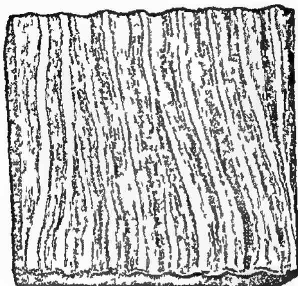


चित्र स० ७—[illegible]

सिलूरियन चट्टानों में मोलस्का [illegible] जाते हैं, किंतु पेंटामरस प्राणी [illegible] के पहले ही नाम शेष हो गए थे। [illegible] स्तर-सचय में भी पाए जाते हैं।

सर्व प्रकार की बालू [illegible] जाते [illegible] पर्वत [illegible]

गए हैं। लहरों के चिह्नवाली चट्टान के एक टुकड़े का चित्र नीचे दिया गया है।



चित्र नं० ८—चट्टान पर लहरों के चिह्न

डेवोनियन-स्तर सचय युग के अंत में पृथ्वी पर वनस्पति उत्पन्न हो गई थी, तथापि न तो तत्कालीन अवशेष ही अधिक पाए जाते हैं और न मिले हुए अवशेष अच्छी स्थिति में ही मिले हैं।

लाल बालू की चट्टानें स्काट्लैंड, आयर्लैंड, बेलजियम, जर्मनी, रूस, कनाडा, संयुक्त राज्य और दक्षिण आफ्रिका में भी पाई जाती हैं।

कार्बोनिफरस स्तर-सचय

कार्बोनिफरस स्तर-सचय के युग का वनस्पति युग भी कह सकते हैं, कारण कि इस युग में वनस्पति की खूब वृद्धि हुई थी। कार्बोनिफरस शब्द का अर्थ है कार्बन उत्पन्न करनेवाला। इस युग में कार्बन बहुत था और इसीलिये इसे यह नाम दिया गया है। इस स्तर सचय में चूने के पत्थर, उनके मपन्न टुकड़े और बालू के पत्थर पाए जाते हैं। तथापि इस स्तर सचय में खनिज कोयलों का स्तर मुख्य है। खनिज कोयले के सबध में आगे चलकर लिखा जायगा। इस स्तर सचय में चूने की चट्टानें ज्यादा पाई जाती हैं। इससे अनुमान किया जाता है कि इस युग में समुद्र जल में—"कार्बोनेट ऑफ् लाइम"-नामक पदार्थ अत्यधिक था और इस पदार्थ से अपने घर बनानेवाले प्रवाल कीटक और क्रिनॉइड (Crinoidea) नामक जीव भी समुद्र में बहुत थे। इस स्तर सचय का चूने की चट्टानों में सीपी शख और प्रवाल, कीटक के सुदर न्यस्तावशेष पाए जाते हैं।

इसी स्तर सचय की चूने की चट्टान में भिन्न भिन्न प्रकार के शख और सीपी पाई जाती हैं।

इस स्तर सचय का मनुष्योपयोगी और विशेष महत्त्व का स्तर खनिज कोयले का स्तर (Coal measure) है। जीर्ण उद्भिज्ज पदार्थों से खनिज कोयला बनता है। इस जीर्ण पदार्थ में बहुत-सा कार्बन होता है। वनस्पति में कार्बन, ऑक्सिजन

और हाइड्रोजन भिन्न भिन्न परिमाण मे पाए जाते हैं। ज्यों-ज्यों वनस्पति अधिकाधिक जीर्ण होती जाती है, त्यों-त्यों उसके ऑक्सिजन और कार्बन के एकत्रित होने से कार्बोनिक असिड बनता जाता है। यह पदार्थ वायु के रूप में हो बनता है। अतएव तैयार होते ही हवा में उड़ जाता है। मट्टी के अंदर दबी हुई वनस्पति में इतना ऑक्सिजन नहीं होता कि जो कार्बन से मिलकर कार्बोनिक असिड तैयार कर सके। अतएव बहुत सा कार्बन वनस्पति मे ही रह जाता है।

खनिज कोयले के स्तर भिन्न भिन्न समय में जमते हैं, अतएव वे भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं। कोयला जितना पुराना होगा, उसमें शिलाजीत (Bitumine) उतना ही कम होगा। कार्बोनिफरस युग मे—इसके पहले के और बाद के युग की अपेक्षा—वनस्पति की खूब वृद्धि हुई थी। अतएव पृथ्वी पर पाए जानेवाले कोयले का अधिकांश इसी स्तर के युग में पाया जाता है। तथापि अन्य युगों के स्तरों मे भी कोयला मिलता है। आधुनिक काल मे भी बहुत-सी जगहों पर कोयला बनता देखा गया है। कलकत्ता नगर से आग्नेय कोण में गंगा-नदी के डेल्टा में १८ फीट मोटा पीट का एक विस्तीर्ण स्तर है। इसके नीचे खनिज कोयले का स्तर है, जिसमें कहीं कहीं चिकनी मट्टी और बालू के स्तर भी पाए जाते हैं।

स्पज के समान छिद्रमय उद्भिज्ज पदार्थ को अँगरेजी में पीट

(Peat) कहते हैं । इसमें लकड़ी के टुकड़े, वृक्ष की जड़ें और पेड़ बहुत पाए जाते हैं । पीट संसार में बहुत पाया जाता है । आयर्लैंड में पीट का स्तर हजारों एकड़ भूमि पर फैला हुआ है । पीट मृदु होता है और हाथ से तोड़ा जा सकता है । कहीं-कहीं इसे ईंधन की तरह जलाने के काम में भी लाते हैं । पीट के स्तर के पानी के अंदर धँस जाने पर यदि उस पर बालू और मट्टी के स्तर जम जायँ, तो उसके भार से वह धीरे धीरे कठिन हो जाता है और तब लिगनाइट (Lignite) नामक कोयले के रूप में परिवर्तित हो जाता है । इसमें काष्ठ की अपेक्षा ज्यादा हाइड्रोजन होता है । रासायनिक क्रिया जारी रहती है और गैस के (जो बत्ती जलाने के काम में आता है) निकलने से यह कोयला बिटूमिनस (Bituminous) कोयला में बदल जाता है । बिसचॉफ (Bischoff) नामक विद्वान् का मत है कि खनिज कोयले से निकलनेवाले ज्वालाग्राही (Inflammable) गैस में कार्बोनिक अम्लिद, हाइड्रोजन (Carburetted hydrogen), नत्रजन और Olefiant-नामक गैस रहते हैं । इन गैसों के धीरे धीरे अलग होते रहने से बिटूमिनस कोयला आंथ्रेसाइट (Anthracite) में बदल जाता है । इस प्रकार के खनिज कोयले को अँगरेजी में ग्लांस काल (Glance coal), कोक (Coke), हार्ड कोल (Hard coal), कल्म (Culm) आदि भिन्न भिन्न नाम दिए गए हैं । आंथ्रेसाइट धीरे-धीरे आंथ्रेसाइट ग्रेफ़ाइट में बदल जाता

है। ग्रेफाइट में शुद्ध कार्बन ज्यादा होता है और वह अधिकतर पुराने स्तरों में ही पाया जाता है।

ऊपर के विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि पृथ्वी के इतिहास के प्रत्येक युग में भिन्न भिन्न जाति का अच्छा बुरा कोयला बनता है, और इसी से खनिज कोयले की रचना में होनेवाले परिवर्तन मालूम हो जाते हैं।

कार्बोनिफरस युग के सिवा अन्य युगों में भी कोयला तो अवश्य बनता रहा है, किंतु वह अधिक उपयोगी नहीं सिद्ध हुआ और आधुनिक काल का कोयला तो करीब करीब निरुपयोगी ही है। कार्बोनिफरस युग में बना खनिज कोयला उत्तम होता है।

जहाँ जहाँ आधुनिक काल में कोयले के विस्तीर्ण प्रदेश पाए जाते हैं, वहाँ अति प्राचीन काल में बड़े बड़े जंगल थे एवं भूमि जल पूर्ण थी। वहाँ की जमीन धीरे धीरे नीचे धँसती गई और जितने वृक्ष उसमें गिरते गए, धीरे धीरे उनका क्षय होता गया। ऊपर की मट्टी में उगे हुए झाड़ झंखाड़ गिर गिरकर उसकी वृद्धि करते रहे। इस प्रकार उद्भिज्ज पदार्थों का संचय बढ़ता गया। पृथ्वी के भीतर भिन्न भिन्न गहराई पर खनिज कोयले के स्तर में वृक्षों के धड़ खड़े के खड़े पाए गए हैं। इससे सिद्ध होता है कि जमीन धीरे धीरे नीचे धँसती रही थी। बूलवर हाम्पटन नगर के पासवाली कोयले की खान में एक एकड़ में ७२ वृक्षों के धड़ (trunk) पाए गए थे। साउथ स्टैफर्ड-

शायर की पार्क फील्ड खान (Park Field Colliery) में पाव एकड़ में ७३ वृक्षों के धड़ मिले थे, जिनमे से एक की लंबाई १५ फीट और दूसरे की ३० फीट थी।

कार्बोनिफरस युग के वृक्ष आधुनिक युग के वृक्षों से बिलकुल भिन्न थे। भारतवर्ष के पहाड़ों पर फर्न नामक वृक्ष पैदा होते हैं। उस युग में इसी नमूने के वृक्ष होते थे। किंतु वे साठ-साठ सत्तर-सत्तर फीट ऊँचे होते थे।

कार्बोनिफरस युग की हवा में उष्णता अधिक थी। और तत्कालीन वातावरण में कार्बोनिक अमिड वायु भी पुष्कल था। कार्बोनिक अलिड से ही वृक्ष कार्बन ग्रहण करते हैं। उस युग का वातावरण उष्ण, साभ्र और सार्द्र था और उसमें इस वायु का भी प्राधान्य था। यही कारण है कि उस जमाने में वनस्पति की खूब वृद्धि हुई।

कार्बोनिफरस युग में सब प्राणी समुद्र में रहते थे। हवा में श्वासोच्छ्वास करनेवाले प्राणियों का बिलकुल अभाव था।

बहुत-से स्थानों में खनिज कोयले के पास ही लोह पाषाण भी मिलता है। लोह-पाषाण, अशुद्ध कार्बोनेट या आक्साइड ऑफ् आयर्न, चिकनी मट्टी या अन्य मृत्तिकामय पदार्थों से बना होता है। इँगलैंड में इसी धातु से लोहा निकाला जाता है। यह लोहा कोयले की खान के पास ही पाया जाता है। इससे

इँगलैंड की अच्छी उन्नति हुई है। कारण कि अशुद्ध धातु को दूर-दूर ले जाने में समय और द्रव्य का अपव्यय नहीं होता। लोहा वहां शुद्ध किया जाता है।

कार्बोनिफरस युग की चट्टानें मनुष्य के बड़े काम की हैं। इसी युग के स्तर में चूने के पत्थर, लोहा, कोयला, आदि पदार्थ पाए जाते हैं। इसी स्तर-सचय की कृपा से इँगलैंड इतना सधन हो गया। अशुद्ध लोहा पृथ्वी पर सर्वत्र पाया जाता है। किंतु कोयले की खानें अति दूर होने से शुद्ध लोहा तैयार करने में ज्यादा खर्च करना पड़ता है।

भारतवर्ष में खनिज कोयला कई स्थानों में मिलता है। कोयले की अधिकांश खान बंगाल प्रांत में हैं। झरिया का कोयला उत्तम श्रेणी का माना जाता है। रानीगंज और झरिया की खानें विशेष प्रसिद्ध हैं। मध्य भारत में उमरिया में भी कोयले की एक खान है।

भारतवर्ष में पाया जानेवाला कोयला कार्बोनिफरस युग के उपरि स्तर (Upper Carboniferous rocks) या उसके ऊपर के स्तर में पाया जाता है। किंतु आसाम का कोयला ओओलिटिक (Oolitic) युग के बाद का है।

पर्मियन स्तर-सचय

कार्बोनिफरस स्तर सचय के ऊपर के प्रस्तरीभूत स्तरों को पहले 'नवीन लाल बालूकी चट्टान' (New red sand stone) नाम दिया गया था। और इसके उपरि (Upper) और अध

(Lower) उपविभाग किए गए थे। अधः विभाग की गणना पालिओजोइक युग के स्तर सचय में की जाती थी और उपरि-विभाग मेसोजोइक युग के स्तर-सचय में गिना जाता था। किंतु अब इन दोनों विभागों को भिन्न-भिन्न नाम दिए गए हैं। उपरि-विभाग को 'पर्मियन' और अधः विभाग को 'त्रियासिक' संज्ञा दी गई है। रूस देश के पर्म गाँव के नाम पर से इस स्तर सचय को यह नाम दिया गया है। पर्मियन स्तर सचय में कभी-कभी मेग्नेशिया-युत चूने के पत्थर (Magnesian lime stone) पाए जाते हैं। अतएव इस स्तर सचय को Magnesian lime stone group भी कहते हैं।

इस स्तर-सचय की गणना पालिओजोइक युग के स्तर-सचय में की जाती है। इस जमाने के वृक्ष कार्बोनिफरस युग के वृक्षों से भिन्न थे। पर्मियन स्तर-सचय में भिन्न भिन्न १६६ जाति की वनस्पति एवं प्राणी के न्यस्तावशेष पाए गए हैं। इनमें से १४८ जातियाँ अन्य किसी स्तर-सचय में नहीं पाई जातीं। मछलियाँ, मोलस्का और प्रवाल कीटक भी इस स्तर सचय में बहुत पाए जाते हैं। इस युग में पृथ्वी पर उरग प्राणी भी बहुत थे। ये नवीन प्राणी पर्मियन युग से कुछ पहले सृष्ट हुए होंगे, कारण कि उनके कुछ अवशेष कार्बोनिफरस युग के उपरि-स्तर में भी पाए जाते हैं। ओअलिटिक युग तक इन [illegible] आकार बदला गया और उनकी सख्या में भी

खूब वृद्धि होती गई। ओथलिटिक युग में उरग प्राणी भी अत्यधिक थे। इतने अधिक प्राणी इसके पूर्व के या बाद के किसी युग में नहीं पाए जाते।

पॉचवॉ परिच्छेद

मेसोजोइक युग

इस युग में हवा में श्वासोच्छ्वास करनेवाले प्राणियों का जन्म हुआ। इस युग के स्तर सचयों का वर्गीकरण पहले किया जा चुका है।

त्रयासिक स्तर-सचय

यह स्तर सचय जर्मनी में बहुत पाया जाता है। वहाँ इसके तीन उपविभाग किए गए थे और इसीलिये इसे यह नाम दिया गया है।

त्रयासिक स्तर सचय मे एक विलक्षण उरग प्राणी के अवशेष पाए जाते हैं। इस प्राणी के दाँत बहुत बडे होते थे, इसीलिये इसे लैबिरिंथोडन (Labyrinthodon) दीर्घदंष्ट्र नाम दिया गया है। प्रोफेसर ओवेन का मत है कि इस प्राणी के दाँत ३½ इच लबे और जड़ (base) के पास १½ इच चौडे होते थे। त्रयासिक स्तर सचय मे इन प्राणियों के पद चिह्न के न्यस्तावशेष पाए जाते हैं।

भारतवर्ष की कोयले की खानों के ऊपर के स्तर में 'दीर्घदंष्ट्र' प्राणियों के अवशेष पाए जाते हैं। नागपुर से दक्षिण की ओर ६० मील की दूरी पर प्राणहिता नदी बहती है। इस नदी के

तट पर वायव्य दिशा में क़रीब १०० मील की दूरी पर कोटा नामक ग्राम है। इस गाँव के पास मगली में और कोटा गाँव से पश्चिम की ओर २० मील की दूरी पर मालड़ी के पास उरग प्राणियों के अवशेष पाए जाते हैं।

ओअलिटिक स्तर-सचय

ग्रीक भाषा में अंडे को 'ओअन' कहते हैं। इसी से 'ओअलाइट' शब्द निकला है। इस स्तर संचय के तीन उपविभाग किए गए हैं—१ लयासिक (Liasic) २ जुरासिक (Jurasic), ३ ओअलाइट (Oolite)।

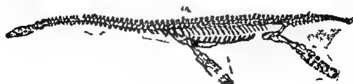
उरग प्राणियों की सृष्टि पर्मियन स्तर सचय के कुछ पहले हुई थी। लयासिक और जुरासिक स्तर-सचयों के युग म अति प्रचड और बलवान् उरग प्राणियों का बाहुल्य था।

लडन नगर के ब्रिटिश म्युनियम नामक-ग्रमहालय मे उरग प्राणियो का बहुत बड़ा समह है। इस समह का वर्णन करते हुए हूग मिलर लिखते हैं—

"गैलरी में, पालिओजोइक युग के बडे-बडे वृक्षों को देखने के बाद कुछ आगे बढ़ने पर दीवार पर टँगी हुई प्रचड आकृतियों की ओर मनुष्य का ध्यान आकर्षित होता है। अति प्राचीन काल की दतकथाओं में वर्णित प्रचड सपक्ष भुजग और ग्रिफ्नि नामक विचित्र प्राणियों से भी अधिक आश्चर्योत्पादक प्राणियों को देखकर मनुष्य भयभीत हो जाता है।

यद्यपि हजारों वर्ष तक ये प्राणी जमीन के अंदर दबे पड़े रहे थे तथापि इनके समान आश्चर्योत्पादक और भयानक प्राणी शायद ही अन्यत्र कहीं दृष्टिगोचर हों। कई प्राणी ऐसे भी हैं जिनके पर भी हैं और स्तन प्राणियों के समान पूँछ भी। इनकी गरदन बड़े अजगर के समान लंबी है। एक स्थान पर एक सपक्ष भुजग लटक रहा है जिसके दाँत तीक्ष्ण और नख मजबूत हैं। इसके पर चिमगादड़ के पंख के समान हैं। इसके सिवा अन्य भी कई अद्भुत प्राणियों का यहाँ अच्छा समह है।"

ओअलिटिक स्तर-सचय में डॉ० माटेल को एक प्राणी मिला था, जिसकी लंबाई ३०-४० फीट थी। इस प्राणी की जाँघ की हड्डी की गोलाई २४ इंच है। उक्त महाशय को एक छोटे-से प्रदेश में भिन्न-भिन्न जाति के ७० प्राणियों के अवशेष मिले थे। ओअलिटिक स्तर-सचय में मिले हुए दो प्राणियों के चित्र नीचे दिए गए हैं। ये प्राणी हैं आयक्थिओसारस (Ichthyosaurus) और प्लेसिओसारस (Plesiosau rus)। आयक्थिओसारस वर्ग के प्राणी की लंबाई तीस फीट



चित्र नं० १

से भी अधिक होती थी। सेमिओसारस वर्ग का प्राणी ७० फीट लम्बा होता था। इन प्राणियों के मेरु-दण्ड की हड्डी (Vertibru), Paddles (डांड) और शरीर की बनावट से अनुमान किया जाता है कि यह प्राणी समुद्र में रहा करता था। इन प्राणियों के दाँतों और जबड़ों को देखकर यही अनुमान किया जाता है कि ये अन्य प्राणियों पर जीवन निर्वाह करते थे।

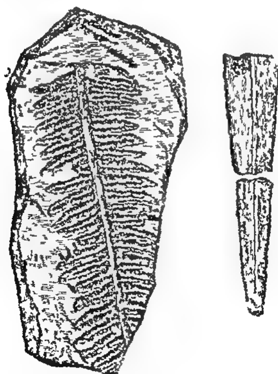
टेरोडैक्टाइल (Pterodactyle) नामक एक और प्राणी के अवशेष इस स्तर-संचय में पाए जाते हैं। इस प्राणी के फैले हुए परों की लम्बाई, एक सिरे से दूसरे सिरे तक, २७ फीट के करीब थी। इस प्राणी के पर चिमगादड़ के परों के समान होते थे। प्रोफेसर ओवेन साहब का मत है कि यह प्राणी तैर भी सकता था।

इस युग के वृक्ष, वनस्पति और मोलस्का भी विशेष प्रकार के होते थे। मोलस्का जीवों में आमोनाइट (Ammonites)—अजशृंगाकृति और बेलेम्नाइट (Belemnites)—बाणाकृति—ही मुख्य हैं। लियस और चॉक की चट्टानों में पाँच सौ प्रकार के अजशृंगाकृति जीव पाए गए हैं। वायव्य हिमालय में अजशृंगाकृति जीव पाए जाते हैं। इसी युग की चट्टान में बाणाकृति जीवों के न्यस्तावशेष मिलते हैं।

लयासिक और ओअलाइट चट्टानों के स्तर हिमालय पर्वत

में भी पाए जाते हैं। उनमें मुख्यतः सूक्ष्म कणमय पत्थर एवं चूने के पत्थर हैं। इस स्तर में मोलस्का के जीव के न्यस्तावशेष अधिक पाए जाते हैं।

बंगाल में, राजमहल पहाड़ में, त्रिचनापल्ली के पास, और कच्छ में जुरासिक काल की चट्टानें पाई जाती हैं। राजमहल पहाड़ में वनस्पति के न्यस्तावशेष अधिक पाए जाते हैं।



चित्र १० १०—वनस्पति का न्यस्तावशेष

क्रिटेशियस स्तर-सचय

योरप के जिस प्रदेश मे पहले पहल यह स्तर सचय मिला था, उस प्रदेश में चॉक की चट्टाने अधिक थीं, और इसी से इस स्तर सचय को यह नाम दिया गया। योरप मे चॉक के स्तर सैकड़ों मील तक फैले हुए हैं। यह स्तर सचय समुद्र-गर्भ में ही बने हैं; अतएव उसमें समुद्र वासी जीवों के ही न्यस्ताव शेष पाए जाते हैं। इस स्तर सचय मे जलज वनस्पति के न्यस्तावशेष भी मिलते हैं।

इस स्तर-सचय मे अजशृगाकृति और बाणाकृति जीवों के न्यस्तावशेष भी मिलते हैं। शिखराकृति शख और सीपी (Turrilites); हैमाइट्स (Hamuites); स्काफाइट्स (Scaphites)—नौकाकृति जीव पेक्टन किन्क्स्टेटस (Pect en quinquecostatus) और नाना जाति के एकिनाडरमस (Echinodermus) आदि भिन्न भिन्न प्रकार के प्राणियों के न्यस्तावशेष इस स्तर मे पाए जाते हैं।

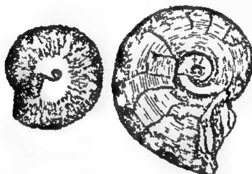


चित्र न० ११—एकिनाडरमस

दक्षिण भारत मे पाण्डुचेरी और त्रिचनापल्ली शहरों के मध्य

में चॉक के स्तर संचय पाए जाते हैं। इस स्तर-सचय में १० जाति के अजशृंगाकृति जीवों के न्यस्तावशेष पाए गए हैं। ये न्यस्तावशेष सर्वोत्तम है और उत्तम स्थिति मे मिला है।

हिमालय पर्वत एव दक्षिण भारत में चॉक के स्तर पाए जाते हैं। इन स्थानों में पाए हुए दो न्यस्तावशेष नीचे के चित्र



चित्र न० १२ १३—अजशृंगाकृति जीव

मे दिखाए गए हैं। इसी युग में सबसे पहले मृदु शरीरवाली मछलियों के अवशेष मिले हैं। इससे पहले के युगों में मछलियों के शरीर पर हड्डी के समान कड़े कवच होते थे।

छठा परिच्छेद

नियोजोइक युग

नित्र्योजोइक युग की चट्टानें दो भागों मे विभक्त की गई हैं—टरशरी और रिसेंट। टरशरी स्तर-सचय के तीन उपविभाग किए गए हैं—१ इओसीन (Eocene), २ मायसीन (Miocene), ३ प्लायोसीन (Pliocene)।

इओसीन उपविभाग के नम्युलिटिक (Nummulitic) स्तर सचय की चट्टानें भारतवर्ष मे बहुत पाई जाती

नम्युलिटिक स्तर सचय—यह स्तर-सचय फोरामिनिफरा (Foraminifera) नामक अतिसूक्ष्म समुद्रवासी प्राणियों की सीपियों से बना है। इन सीपियों के सयुक्त होने से बने ए ढेले बहुत पाए जाते हैं। ये सीपियाँ सिक्के के आकार की होती हैं, अतएव उन्हें नम्युलाइट (Nummulite)—मुद्राकृति—नाम दिया गया है। प्रोफेसर ओवेन लिखते हैं कि ये सीपियाँ सब स्फटमय (Sileceous) चट्टानों में पाई जाती हैं। ये चाक में भी देखी जाती हैं। अटलांटिक महासागर की तली मे दो मील की गहराई पर भी ये सीपियाँ पाई जाती हैं।

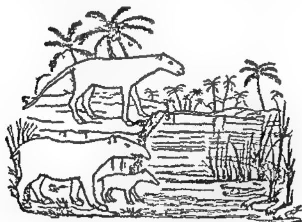
भिन्न भिन्न प्रकार की नम्युलिटिक चट्टानों में भिन्न भिन्न बावन जाति की मुद्राकृति सीपियों के ध्वस्तावशेष पाए गए हैं।

नम्युलिटिक चट्टानें पृथ्वी पर बहुत पाई जाती हैं। हिमालय पर्वत पर १६००० फ़ीट को ऊँचाई पर नम्यूलिटिक स्तर सचय पाया जाता है। भड़ोच के पासवाले राजपीपला पहाड़ मे, सूरत के पास तारकेश्वर मे, काठियावाड़, कच्छ, सिंध और आसाम को खासिया पहाड़ो में भी यह स्तर-सचय पाया जाता है। इसी युग के स्तर-सचय में सबसे पहले सस्तन प्राणियों के न्यस्तावशेष मिलते हैं।

मयोसीन-स्तर-सचय—खभात उपसागर के पेरीम द्वीप मे इस स्तर सचय की चट्टानें पाई जाती हैं। पेरीम के न्यस्तावशेषों में मस्तोदन (Mastodan), दिनोथेरियम (Dinotherium) एक जाति का प्रचड गेंडा आदि प्राणियों के अवशेष पाए जाते हैं। उसी प्रकार घोड़ा, दो जाति के मगर, मीठे पानी के कछुए आदि प्राणियों के अवशेष भी मिलते हैं।

इरावती नदी की घाटी मे भी इस युग की चट्टानें पाई जाती हैं। उनमें भी सस्तन प्राणियों के अवशेष मिलते हैं। परतु सब से अधिक महत्त्व के न्यस्तावशेष हिमालय पर्वत-श्रेणी में पाए जाते हैं। शिवालिक पहाड़ में, मीठे जल मे बने हुए स्तर सचय सैकड़ों मील तक फैले हुए हैं। शिवालिक पर्वत में पुष्कल न्यस्तावशेष पाए जाते हैं। मोलस्का, नदी में पाई जाने वाली मछलियों के अवशेष, हाथी एव मस्तोदन वर्ग के प्राणियों के न्यस्तावशेष भी उक्त पर्वत श्रेणी में पाए जाते हैं। इस स्तर स [illegible] हुए एक हाथी-दाँत की लंबाई ९ फ़ीट ६ ...

और गोलाई ७७ इंच है। हिमालय पर्वत में जलघोटक, हाथी, जिराफ, गेंडा, घोड़ा, ऊँट, हिरन, बंदर, कछुआ आदि प्राणियों के अवशेष भी पाए गए हैं। इनके अलावा शिवाथेरियम (Sivatherium) नामक एक विलक्षण प्राणी के अवशेष भी मिले हैं। यह प्राणी जुगाली करनेवाले और मोटी त्वचा वाले प्राणियों के बीच की श्रेणी का है। यह गेंडे से बड़ा था। इसके चार सांग होते थे एवं एक छोटी-सी सूँड। सजीवावस्था में यह प्राणी एक अति विशाल कृष्णसार के समान दिखाई



चित्र नं० १४

देता रहा होगा। उसका सिर छोटा और मोटा होता था। उसके आगे के दो सींग छोटे और पीछे के दो सींग मोटे और पीछे की ओर झुके रहते थे। उसकी आकृति और मुख

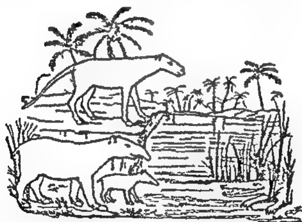
गैंड के समान थे एवं उसके ओंठ मोटे तथा सूँड छोटी होती थी।

गंगा नदी में एक विलक्षण कछुए की हड्डियाँ पाई गई हैं। इसे अँगरेजी में 'कोलोसोकेलिस ऍटलस' (Colossochelys Atlas) नाम दिया गया है। इस कछुए की ढाल (Shell) १० फीट २ इंच लंबी थी। ढाल का व्यास आठ फीट था, और उसकी ऊँचाई सात फीट के लगभग थी।

प्लायोसीन स्तर-संचय

नर्मदा और गोदावरी की घाटी में पाए हुए अवशेषों का शिवालिक और पेरिम के अवशेषों से बहुत कुछ साम्य है। नर्मदा की घाटी में हाथी, घोड़ा, बैल, जलघोड़ा आदि प्राणियों के अवशेष पाए जाते हैं। और जिस स्थान पर हाथी, बैल आदि प्राणियों की हड्डियाँ पाई गई थीं। वहीं भूपृष्ठ से प्रायः २० फीट की गहराई पर गोमेद पत्थर की एक छुरी पाई गई थी। यह मनुष्य-कृति का नमूना है।

और गोलाई ७७ इंच है। हिमालय पर्वत में जलघोटक, हाथी, जिराफ, गैंडा, घोड़ा, ऊँट, हिरन, बंदर, कछुआ आदि प्राणियों के अवशेष भी पाए गए हैं। इनके अलावा शिवाथेरियम (Sivatherium)-नामक एक विलक्षण प्राणी के अवशेष भी मिले हैं। यह प्राणी जुगाली करनेवाले और मोटी त्वचा वाले प्राणियों के बीच की श्रेणी का है। यह गैंडे से बड़ा था। इसके चार सींग होते थे एवं एक छोटी-सी सूँड। सजीवावस्था में यह प्राणी एक अति विशाल कृष्णसार के समान दिखाई



चित्र नं० १४

देता रहा होगा। उसका सिर छोटा और मोटा होता था। उसके आगे के दो सींग छोटे और पीछे के दो सींग मोटे और पीछे की ओर झुके रहते थे। उसकी आकृति और स-

थीसेटिया लेन ग[illegible] ।

[illegible]

गेंड के समान थे एवं उसके ओंठ मोटे तथा सूँड छोटी होती थी।

गंगा नदी में एक विलक्षण कछुए की हड्डियाँ पाई गई हैं। इसे अँगरेज़ों ने 'कोलोसोकेलिस ऍटलस' (Colossochelys Atlas) नाम दिया गया है। इस कछुए की* ढाल (Shell) १२ फ़ीट ३ इंच लम्बी थी। ढाल का व्यास आठ फ़ीट था, और उसकी ऊँचाई सात फ़ीट के लगभग थी।

प्लायोसीन स्तर-संचय

नर्मदा और गोदावरी की घाटी में पाए हुए न्यस्तावशेषों का शिवालिक और पेरिम के न्यस्तावशेषों से बहुत कुछ साम्य है। नर्मदा की घाटी में हाथी, घोड़ा, बैल, जलघोटक आदि प्राणियों के अवशेष पाए जाते हैं। और जिस स्थान पर हाथी, बैल आदि प्राणियों की हड्डियाँ पाई गई थीं। वहीं भूपृष्ठ से क़रीब ३० फ़ीट की गहराई पर गोमेद पत्थर की एक छुरी पाई गई थी। यह मनुष्य-कृति का नमूना है।

---

* डॉ० मांटेल ने अपने Wonders of Geology नामक ग्रंथ में लिखा है कि इसकी लंबाई १२ फ़ीट से कम थी, किंतु ओवेन इसकी लंबाई २० फ़ीट बताते हैं। यहाँ दिया हुआ वर्णन

सतह पर ही पाए गए थे। ग्वाडेलूप में मिली हुई हड्डियाँ चूने की चट्टान में मिली थीं। इसी चट्टान में नाग के पत्थरी फल, मिट्टी के बरतन के टुकड़े और आधुनिक काल के प्रवाल और सीपी पाई गई हैं।

लदन के पदार्थ संग्रहालय में, चट्टान में पाए हुए मनुष्य का कंकाल रक्खा है। उसका चित्र नीचे दिया जाता है—



चित्र न० १६—मानव प्राणी का अस्थि पंजर

महीन मिट्टी के भर जाने से कच्छ का रन बना है। इसका क्षेत्रफल क़रीब सात हजार वर्गमील है। भारतवर्ष के भूस्तर-निरीक्षकों की धारणा है कि नदियों के साथ बहकर आई हुई महीन मिट्टी आदि वस्तुओं के भर जाने से कच्छ का रन बना

है। वर्ष के कुछ महीनों में वहाँ जल भरा रहता है और कुछ महीनों में जमीन सूखी रहती है। परतु धीरे-धीरे रन की सतह ऊँची होती जायगी और धीरे धीरे नदियों की गहराई कम हो जायगी।

नर्मदा, ताप्ती आदि नदियों के प्रवाह के साथ बहकर आए हुए पदार्थों से खंभात की खाड़ी भी शीघ्र ही भर जायगी।

इस प्रकार स्तर पर स्तर जमते जा रहे हैं। पृथ्वी की भीतरी शक्ति भी अपना कार्य कर रही है। ज्वालामुखी से निकले हुए पदार्थ आस पास के प्रदेशा मे फैलकर भू पृष्ठ की सतह ऊँची कर रहे हैं। एव समुद्र-तल भी धीरे धीरे ऊपर उठता जा रहा है।

आधुनिक युग के न्यस्तावशेषों और आधुनिक सायोसीन युग के अवशेषों में बहुत कुछ साम्य है। आधुनिक युग के स्तर-सचय मे मानव-प्राणी के अवशेष पाए जायँगे।

सातवाँ परिच्छेद

अग्नि-जन्य चट्टानें

गत परिच्छेदों में जल जन्य चट्टानों का वर्णन किया गया, इस परिच्छेद में अग्नि जन्य चट्टानों पर विचार किया जायगा।

पहले लिख आए हैं कि पूर्वकाल में पृथ्वी अत्युष्ण प्रवाही पदार्थ का गोला था। आधुनिक काल में भी भूगर्भ में अत्युष्ण प्रवाही पदार्थ भरा पड़ा है। यह तो एक सर्वमान्य बात है कि द्रव चट्टानें ज्वालामुखी पर्वत में से बाहर निकलती रहती हैं। कभी-कभी यह पदार्थ पृथ्वी की सतह तक तो नहीं आता, किंतु ऊपर के स्तर में वेग से पैठ जाता है। मद्रास प्रांत के सालेम-नगर के पास सफरी दुर्ग में नीस के स्तर में ग्रेनाइट पाया जाता है। इसका चित्र नीचे दिया गया है।



चित्र सं० १७—नीस स्तर मध्य में ग्रेनाइट

अग्नि-जन्य चट्टानों के वर्ग—अग्नि-जन्य चट्टानें दो वर्गों में बाँटी गई हैं—वालकेनिक (Volcanic) ज्वालामुखीय और प्लुटानिक (Plutonic)।

ज्वालामुखी पर्वत के मुख में से लावा आदि पदार्थ निकलते हैं। ये पदार्थ आस-पास के प्रदेशों में फैल जाते हैं। इन पदार्थों के शीतल हो जाने से बनी हुई चट्टानें ज्वालामुखीय (Volcanic) कहाती हैं। परतु प्लुटानिक चट्टान पृथ्वी की सतह पर ठंडी नहीं होतीं। वे पृथ्वी के अदर ही न्यूनाधिक भार से शीतल हो जाती हैं। ज्वालामुखी द्वारा उगले हुए लावा, बेसाल्ट आदि पदार्थों के शीतल होने से बनी हुई चट्टान ज्वालामुखीय चट्टानों के उदाहरण हैं और इस परिच्छेद के प्रारभ में दिया हुआ चित्र—ग्रेनाइट—प्लुटानिक वर्ग की चट्टानें हैं।

रासायनिक दृष्टि से भिन्न भिन्न अग्नि-जन्य चट्टानों में अतर नहीं होता। उदाहरणार्थ ग्रेनाइट को ले लीजिए। यदि ग्रेनाइट धीरे धीरे शीतल होता है, तो स्फटिक छोटे होते हैं और जल्दी शीतल होता है, तो स्फटिक बड़े होते हैं।

एक भूस्तर शास्त्र-वेत्ता का मत है कि पृथ्वी के ठोस कवच के नीचे दो प्रकार के धातु-रस पाए जाते हैं। ये रस एक दूसरे से बिलकुल भिन्न हैं। ऊपर के स्तर में नीचे के स्तर की अपेक्षा सिलिका अधिक रहता है और बेस कम। अतएव उसे ऍसिड (Acid) स्तर नाम दिया गया है। बेसिक (Basic) स्तर

में सिलिका तो कम रहती है किंतु उसमें मृत्तिकामय बेस और ऑक्साइड ऑफ आयर्न अधिक रहता है। इन्हीं दो स्तरों से अग्नि जन्य चट्टानों की उत्पत्ति हुई है। एसिड चट्टानें ऊपर के स्तर से और बेसिक चट्टानें नीचे के स्तर से बनी हैं। जिस स्थान पर ये दोनो स्तर एक दूसरे से मिलते हैं, वहाँ की चट्टानें मिश्र चट्टानें कहाती हैं।

चट्टानों मे पाए जानेवाली सिलिका के परिमाण के आधार पर चट्टानों का वर्गीकरण करने की प्रथा, कई भूस्तर शास्त्र-वेत्ता ठीक नहीं समझते। तथापि हमारे मत से यह रीति सर्वोत्तम है, कारण कि इसी रीति का अवलंबन करने से सब बातें चट ध्यान म आ जाती हैं।

एसिड चट्टानें तो प्राचीन काल में बनी हैं किंतु बेसिक चट्टानें मेसोजोइक और टर्शिओजोइक युग म निर्माण हुई हैं।

प्लूटानिक चट्टानें—इस वर्ग की चट्टानों में ग्रेनाइट जाति की चट्टानें विशेष महत्त्व की हैं। असली ग्रेनाइट क्वार्ट्ज, फेलस्पार और अभ्रक से बना होता है। ये पदार्थ एक दूसरे से इतने भिन्न रहते हैं कि सहज ही पहचाने जा सकते हैं। ग्रैफिक ग्रेनाइट (Graphic granite) में फेलस्पार अधिक रहता है। इसमें क्वार्ट्ज के स्फटिक इस ढंग से मिले रहते हैं कि देखनेवाले को एकदम भास हो जाता है कि उस पर अक्षर लिखे हैं। एक प्रकार का ग्रैफिक ग्रेनाइट नागपुर के पास पाया जाता है। अभ्रक-रहित क्वार्ट्ज में फेलस्पार के

स्फटिक हों, तो उस ग्रेनाइट को 'क्वार्ट्ज पार्फरी (Quartz Porphyry) कहते हैं। सायनिटिक (Syenitic) ग्रेनाइट में फेलस्पार (Orthoclase Felspar) और हॉर्न ब्लैंड पाए जाते हैं। तथापि कभी-कभी कार्ट्ज और अबरक भी न्यूनता में पाए जाते हैं। इसमें प्रतिशत ५५ से ६० भाग सिलिका पाई जाती है।

यूराइट (Eurite)—रासायनिक दृष्टि से ग्रेनाइट और यूराइट में बहुत कम अंतर है। यह भी एक प्रकार का ग्रेनाइट ही है। इसमें अबरक का एकदम अभाव है। प्रोटोजीन (Protogine) ग्रेनाइट में अन्य पदार्थों के साथ-ही साथ अबरक के स्थान में टाल्क (Talc) पाया जाता है। किंतु लायल* के मत से यह पदार्थ टाल्क नहीं है वरन् अबरक का रूपांतर है। उक्त भिन्न भिन्न जाति के ग्रेनाइट को फेलस्टौन (Felstone)-नामक एक ही संज्ञा दी गई है।

सायनाइट और प्रोटोजीन को छोड़कर ग्रेनाइट वर्ग की अन्य सब चट्टानें एसिडिक हैं। एक भूस्तर-वेत्ता ने उक्त दोनों की गणना मिश्र-वर्ग में की है।

प्लूटानिक बेसिक चट्टानों में ग्रीन स्टोन (Green Stone) वर्ग की चट्टानें विशेष महत्त्व की हैं। उनमें एक प्रकार का

---

* Student's Elements of Geology by Sir C Lyell, Page 557

फेलस्पार और हार्न ब्लेंड एव आगाइट (Augite) या अब रक पाया जाता है।

रासायनिक दृष्टि से ग्रीन स्टोन और बेसाल्ट (Basalt) में ज्यादा फर्क नहीं है। ग्रीन स्टोन का रग कुछ काली झाईंयुत हरा होता है।

वालकेनिक (ज्वालामुखीय) चट्टानें—प्लुटानिक चट्टानें भूपृष्ठ से बहुत नीचे ठढी होती हैं। अतएव उनमें नलिकाएँ नहीं होती। परतु ज्वालामुखीय चट्टानें पृथ्वी की सतह पर ठढी होती हैं, अतएव उनमें पोली नलिकाएँ रह जाती हैं। धातु रस के घन होते समय उसमें से निकले हुए वायु के बुलबुले के कारण ये नलिकाएँ बन जाती हैं।

ट्रैकिटिक (Trachyte) और बेसाल्टिक (Basaltic) नामक वालकेनिक चट्टानों के दो मुख्य वर्ग हैं। ट्रैकिटिक वर्ग की मुख्य चट्टाने नीचे दी जाती हैं।

ट्रैकाइट (Trachyte)—यह चट्टान खुरदुरी (Rough) होती है। और इसीलिये इसे यह नाम दिया गया है। इसमें एक प्रकार का फेलस्पार और हार्न ब्लेंड पाया जाता है। इसमे कभी-कभी अभरक और क्वार्ट्ज भी पाया जाता है।

आबसीडियन (Obsidian)—यह एक प्रकार का ज्वालामुखीय कॉंच है। इसका रग काला, गहरा हरा या ताम्बी होता है।

बेसाल्ट-नामक चट्टान मुख्यत ऑगाइट और फेलस्पार के

[illegible] से बनी है। इसमें ऑलिवाइन (Alivine) नामक पदार्थ और कभी कभी अशुद्ध लोहचुंबक भी पाया जाता है।

बेसाल्ट वर्ग की चट्टानों की नलिकाओं में जिओलाइट (Zeolite)-नामक खनिज पदार्थ भरा रहता है।

ट्रैप (Trap)—ग्रीनस्टोन और बेसाल्ट को साधारणतया ट्रैप संज्ञा दी गई है। स्वीडन देश में सीढ़ी को ट्रैप कहते हैं। इस प्रकार की चट्टानें सीढ़ी के समान होती हैं, इसलिये उन्हें यह नाम दिया गया है। सीढ़ियों की बदौलत इस चट्टान को पहचानने में दिक्कत नहीं होती।

ट्रैप चट्टानें कणमय, अमिग्डलोइडल (Amygdaloidal)* पार्फिरिटिक और स्फटिकमय होती हैं। इस जाति की चट्टानें भारत में बहुत पाई जाती हैं। बेलगांव से पूना तक और बंबई से अमरकंटक तक के विशाल ट्रैप चट्टानें फैली हुई हैं। दक्षिण भारत में भी ट्रैप चट्टानें पाई जाती हैं। दक्षिण भारत और मालवे की ट्रैप चट्टानें अमिग्डलाइडल हैं। इसकी नलिकाओं में विशेषतः [illegible] या अगाइट (गोमेद) भरा रहता है। ट्रैप चट्टान का [illegible] किया जाता है।

भारतवर्ष की ट्रैप चट्टानों के स्तर क्षितिज समानांतर हैं।

---

* जिन चट्टानों में भिन्न भिन्न खनिजों की बादाम के आकार की ग्रंथियाँ (Almond shaped nodules) पाई जाती हैं, उन्हें यह विशेषण लगाया जाता है।



चित्र नं० १८—ट्रैप

ये स्तर ज्वालामुखीय रसों के भिन्न-भिन्न प्रवाहों से बने हैं। इन चट्टानों की मुटाई पाँच हजार फीट तक पाई जाती है। परन्तु ज्वालामुखी पहाड़ के मुख बहुत कम पाए जाते हैं। तथापि ज्वालामुखी पर्वतों के पास पाई जानेवाली राख के समान राख ट्रैप में भी पाई जाती है। कुछ भूस्तर-वेत्ताओं का मत है कि दक्षिण भारत और मालवा का ट्रैप पहले समुद्र गर्भ में था। परन्तु इसमें समुद्र-वासी जीवों के न्यस्तावशेष नहीं पाए जाते हैं। इसलिये यह नहीं माना जा सकता कि यह प्रदेश प्राचीन काल में समुद्र-गर्भ में स्थित था। पश्चिमी भारत के ट्रैप में मीठे जल वाली सीपियों के अवशेष पाए जाते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि ज्वालामुखीय रसों के भिन्न भिन्न प्रवाहों के मध्य में बहुत समय व्यतीत हुआ होगा। ट्रैप चट्टानों में ये स्तर बहुत पाए जाते हैं। निज़ाम के राज्य, बरार, नागपुर के पास नर्मदा की घाटी और बम्बई द्वीप में इन स्तरों का बाहुल्य है। इन स्तरों में मेंढक, कीड़े और वनस्पति के न्यस्तावशेष पाए जाते हैं। जिस समय इस देश में ज्वालामुखीय रसों के प्रवाह सर्वप्रथम प्रवाहित हुए, उस समय

छोटी मोटी नदियों के एक तट पर बाँध से बँध गए। जिससे वे सरोवर में परिणत हो गई। ये सरोवर एक बहुत लंबे समय के बाद नवीन प्रवाह से भर गए। इन दोनों प्रवाहों के बीच में बहुत समय तक सरोवर में जल भरा रहा, और यही कारण है कि ट्रैप में मीठे पानी के प्राणियों के ध्वंसावशेष पाए जाते हैं।

पश्चिमी हिंदुस्तान और मध्य हिंदुस्तान का ट्रैप इयोसीन युग से पहले का और क्रिटेसियस युग के बाद का है। नम्यूलिटिक चूने का पत्थर ट्रैप पर विषमान्तर फैला हुआ है और उसमें ट्रैप के गोल पत्थर पाए जाते हैं। परंतु नर्मदा की घाटी में ट्रैप क्रिटेशियस स्तर पर फैला हुआ। स्तमाकृति बेसाल्ट ट्रैप के क्षेत्र में बहुत पाया जाता है। स्तम्भ सम चार, पाँच या छह कोनेवाले होते हैं। शहर के पास कहीं के पहाड़ में यह चट्टान कई मील तक फैली हुई है। पूना और खंडाले के बीच में खड़काले स्टेशन के पास बेसाल्ट के स्तंभ क्षितिज समानांतर पाए जाते हैं।

चट्टानों की कठिनता, जल से घुल जाने आदि कारणों से ट्रैप को सीढ़ी की आकृति प्राप्त हो गई है। ट्रैप को पहचानने का यही एक सर्वोत्तम साधन है।

ट्रैप चट्टानों में भिन्न भिन्न प्रकार के क्वार्ट्ज, कार्बोनेट ऑफ लाइम, भिन्न-भिन्न प्रकार के जिओलाइट आदि खनिज पाए जाते हैं। क्लोराइट पर बाद में रेखा पड़ जाती है।

इससे यह सिद्ध होता है कि वह क्वार्ट्ज से भिन्न है। एसिड डालने से यह बुदबुदाने लगता है, अतएव कार्बोनेट ऑफ् लाइम से भी जुदा है।

ट्रैप चट्टान से बनी जमीन बहुत उपजाऊ होती है। कारण, उसमें सिलिका अलुमिना, लोहा, चूना, मेगनेशिया, पोटास, सोडा आदि पदार्थ होते हैं और यही पदार्थ वृक्षों के मुख्य खाद्य पदार्थ हैं।

लैटराइट (Laterite)—कई स्थानों पर ट्रैप के शिखर पर लैटराइट पाया जाता है। इसका रंग लाल या ईंट या खपड़ेल के रंग के समान होता है। यह सिलिकेट ऑफ् अलुमिना और आक्साइड ऑफ् आयर्न से बनी होती है। इसी से इसे यह नाम दिया गया है। इसमें लाल रंग की लोहे को मिट्टी पाई जाती है। यह कभी कभी बदलकर पीली हो जाती है। खोदते समय तो यह पत्थर कुछ नरम होता है किंतु हवा लगने पर कड़ा हो जाता है। इसलिये यह इमारत के लिये अच्छा है। यह चट्टान जल-जन्य है। इसमें आक्साइड ऑफ् आयर्न अधिक होता है। लैटराइट में लोह पाषाण पाया जाता है। कहीं कहीं लोग इससे शुद्ध लोहा बनाते हैं। लैटराइट अधिकतर पहाड़ों के शिखरों पर ही पाया जाता है।

यद्यपि पृथ्वी पर के प्राणी निर्जीव हो गए हैं और उनके स्थान पर नवीन प्राणी सृष्ट हो गए हैं। तथापि ये प्राणी एकदम निर्जीव नहीं हुए थे। प्राणियों की हरएक जाति धीरे धीरे ही निर्जीव हुई थी। एव धीरे धीरे ही वह बढ़ी भी थी। ज्यों-ज्यों मानव प्राणी की वृद्धि होती जा रही है, त्यों-त्यों वह जगलों को काटकर नवीन-नवीन स्थानों में बसती करता जा रहा है, जिससे वन्य प्राणियों का क्रमश क्षय होता जा रहा है।

कुछ भूस्तर-वेत्ताओं का मत है कि जिस प्रकार मनुष्य के आयुष्य की मर्यादा होती है, उसी प्रकार जाति की आयुष्य की भी मर्यादा होती है। गत परिच्छेदों को पढने से यह बात भले प्रकार मालूम हो जायगी।

इस पृथ्वी की उत्पत्ति हुए कितने* वर्ष हुए, इसका अनुमान करना अशक्य-सा है। जिन शक्तियों का कार्य आधुनिक काल में भी चल रहा है उन्हीं शक्तियों द्वारा किए गए परिवर्तनों की कल्पना करने पर हम इतना ही कह सकते हैं कि पृथ्वी को उत्पन्न हुए अरबों वर्ष हो गए।

ड्यूक ऑफ आर्गल-नामक ग्रथकर्ता ने लिखा है कि भूस्तर विद्या-सबधी युग बहुत बड़े हैं। तथापि हम अनुमान कर सकते हैं कि उनका आरभ कब हुआ। यह काल एक बड़े

* बिसकाफ के प्रयोगों के आधार पर गणित द्वारा प्रोफेसर हाटन ने निश्चित किया है कि पृथ्वी को ११२ से ७ तक शीतल होने में १,२६८०,००,००० वर्ष लगे हैं।